अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

वार्षिक मूल्य ६) ॥ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ॥ १ प्रति का २ आना

वर्ष–२, अंक–३३ ॥ काशी ॥ शुक्रवार, १८ मई, '५६

भिक्षुओ !

दोनों ही अन्तों (अतियों) में न जाकर तथागत ने मध्यम-मार्ग खोज निकाला है, जो कि आँख देनेवाला, ज्ञान करानेवाला, उपशम (शांति) के लिए, अभिज्ञ होने के लिए, संबोध (परिपूर्ण ज्ञान) के लिए, निर्वाण के लिए है। वह कौन सा मध्यम-मार्ग (मध्यम-प्रतिपद) तथागत ने खोज निकाला है ? वह यही आर्य-अष्टांगिक मार्ग है, जैसे कि सम्यक् (ठीक)-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यक्-वचन, सम्यक्-कर्म, सम्यक्-जीविका, सम्यक्-व्यायाम (प्रयत्न परिश्रम), सम्यक्-स्मृति, और सम्यक्-समाधि।

(धर्मचक्र-प्रवर्तन-सूत्र)

—भगवान् बुद्ध

सामूहिक चिंतन की आवश्यकता

[विनोबा]

हमारे देशवासियों में कुछ अच्छे गुण हैं और कुछ दोष भी। दोनों का दर्शन छोटी-छोटी बातों में होते रहता है।

यहाँ के लोग अपनी-अपनी चिंता करते हैं, दूसरों की नहीं। यह एक बड़ा भारी दोष है। सामाजिक चिंता का अभाव हमारे यहाँ है। सामूहिक कल्पना करने की वृत्ति या व्यवस्था करने की शक्ति हम में बहुत कम है। फलतः जिन लोगों में इंतजाम करने की कुछ शक्ति थी, उन्होंने हम पर अपनी सत्ताएँ लादीं। उनके कारण कभी तीव्र असंतोष फैलता, तो राज्य बदल जाते, लेकिन हम रहते दूसरों के अधीन ही। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि लोगों को सामूहिक चिंतन की सीख दी जाय। इसे शिक्षण का ही एक अंग बनाना होगा।

ग्राम-चिंतन का परिणाम

इस देश के लिए यह कोई मुश्किल बात भी नहीं है, क्योंकि हमारी मुख्य रचना गाँवों की है। यहाँ छोटे-छोटे गाँव बहुत हैं। गाँव का एक ही परिवार यदि माना जाय, तो इंतजाम करना कोई मुश्किल बात नहीं होगी। आज यहाँ न तो सामूहिक सफाई की भावना है, न सामूहिक रचना की और न सामूहिक जीवन की। घर साफ करके कूड़ा रास्ते में फेंक देंगे, तो मकान की हद सड़क के ऊपर भी ले जायेंगे। जाति-भेदों के साथ-साथ भिन्न-भिन्न पक्ष भी बन गये हैं। एक घर में एक जातिवाला है, तो उसकी जाति का आदमी दूसरे गाँव में मिलेगा और दोनों परस्पर में तो संबंध रखेंगे; लेकिन पड़ोसी से नहीं, क्योंकि वह उसकी जातिवाला नहीं है! इससे हम बिलकुल शिथिल बन गये हैं। इसके कारण सामूहिक ढंग से सोच नहीं पाते और आर्थिक उन्नति भी नहीं कर पाते। हरएक अपनी-अपनी आर्थिक चिंता करता है। पड़ोसी भूखा है, तो चिंता या जिम्मेवारी कोई महसूस नहीं करता। इसलिए ग्रामचिंतन, सामूहिक चिंतन की अत्यंत जरूरत है, ताकि आरोग्य, तालीम आदि की भी सामूहिक व्यवस्था हो सके और गाँव में कोई भूमिहीन न रहे, इसकी योजना, ग्रामोद्योग की योजना, सामूहिक उत्सव आदि किये जा सकें। भूदान-यज्ञ के द्वारा इसका ही प्रारंभ किया गया है और भूमि का मसला हल होने से ही दूसरे भी मसले सहज में हल हो सकते हैं।

हमारे यहाँ आध्यात्मिक विचार भी एकांगी बन गया और भक्ति-मार्ग में एकांगिता आ गयी। सब मिलकर भगवान् की भक्ति करने की कोई योजना नहीं। जिसके मन में जो आया, उसने वह कर लिया। सामूहिक साधना जैसी भी कोई चीज है, इसका भान आध्यात्मिक पुरुषों को नहीं रहा। फलतः छोटे-छोटे पंथ बनते हैं, जिनसे समाज के टुकड़े हो जाते हैं। पांथिक प्रवृत्ति सामाजिक प्रवृत्ति नहीं है। वह भी जाति बढ़ानेवाली ही वृत्ति है। व्यापक दृष्टि से उसके लिए सोचना कठिन हो गया।

परंतु इस विज्ञान के जमाने में संकुचित चिंतन अब नहीं चलेगा। विश्व-व्यापक चिंतन करेंगे, तभी हम टिकेंगे। केवल जाति-भेद ही नहीं, पांथिक भेद, धर्म-भेद, आर्थिक भेद आदि हमें मिटाने होंगे। गाँव का एक परिवार बनाना होगा और आर्थिक नियोजन से आरंभ करके सांस्कृतिक आयोजन तक करने पड़ेंगे। ऐसा करने से ही हम ताकतवान् बन सकते हैं। यह गहरे चिंतन का विषय है। हमने संकेत मात्र कर दिया।

आज दुनिया में जितनी शांति की चाह और प्यास है, उतनी शायद ही पहले कभी रही होगी। लेकिन अशांति का कारण है, समाज की गलत रचना। सारा समाज आज पैसे पर खड़ा है और सब पैसे के पीछे पड़े हैं। वस्तुतः मनुष्य का सारा ध्यान प्रेम संपादन करने में लगना चाहिए। लेकिन लोग कमाते हैं, पैसा और परिणाम में पाते हैं, एक दूसरे का द्वेष। कोई किसी की परवाह नहीं करता। पास-पास रहते हुए भी जैसे किसी का कोई संबंध ही नहीं है, ऐसा बरतते हैं। परिणाम-स्वरूप गाँव-गाँव में दुःख और द्वेष भरा पड़ा है और शांति गायब हो गई है। गाँवों में एक दूसरे की कुछ परवाह करते भी हैं, लेकिन शहरों में तो पड़ोसी को भी नहीं पहचाना जाता। अतः सब के हित का सामूहिक चिंतन किये बिना हम शांति और सुख की कैसे अपेक्षा कर सकते हैं ?

व्यक्ति जैसे अपने कुटुंब में सुख-शांति का अनुभव करता है, वैसे ही समाज के प्रति भी यदि वह कुटुंब-भावना का व्यवहार करे, तो वह अधिक सुख और शांति ही अनुभव करेगा।

बाँट-बाँट कर खाएँ

एक सत्पुरुष की मशहूर कहानी है। एक छोटी-सी जगह वह सो गया और बाहर बारिश जोरों से आ रही थी। ठंड में ठिठुरता हुआ दूसरा मनुष्य वहाँ आया और उसने आश्रय माँगा। एक ही मनुष्य के सो सकने की जगह वहाँ थी। सत्पुरुष ने कहा, "आ जाओ, दोनों बैठ तो सकते हैं।" फिर एक तीसरा शख्स आया और उसने भी आश्रय माँगा। तीनों बैठ नहीं सकते थे, लेकिन खड़े तो रह सकते थे। उसे भी बुला लिया गया और तीनों ने खड़े-खड़े रात बितायी। सार यह कि तकलीफ भले ही हो, लेकिन सहूलियत सबको होनी चाहिए। इसी प्रकार जमीन का बँटवारा हम करेंगे, तो सबको समान जमीन मिलेगी। किसी के पास पचास, किसी के पास तीस, तो किसी के पास दस, इस तरह नहीं होगा। सामूहिक भावना की वृद्धि के लिए साम्ययोग जरूरी है। जो मनुष्य दूसरों के लिए तकलीफ नहीं उठाता है, केवल अपना ही सोचता है, वह 'देशवासी' नहीं, 'देहवासी' है।

और, इस जमाने में, सारे देश और समाज इतने निकट आ गये हैं कि अब यहाँ अपना-अपना ही सोचना चल भी नहीं सकता।

* * *

.....विचार से हम विश्व-मानव हैं, सेवा के लिए हम भारतीय हैं और प्रत्यक्ष कार्य के लिए फलाने-फलाने गाँव के हैं।..... —विनोबा

पुरुषार्थ को चुनौती

.....हिंदुस्तान की मनोभूमि इस बात के लिए तैयार है कि सामूहिक जीवन के लिए यहाँ व्यक्तित्व का होम किया जाय। आज की भारतीय परिस्थिति में दो बल एकत्र हुए हैं। इस भूमि में प्राचीन काल से आज तक अखंडता से चलते आया हुआ जो आत्मज्ञान है वह, और आधुनिक जमाने में जो विज्ञान चारों ओर फैला है वह, इस भूमि में आये हैं। इन दोनों शक्तियों का संगम इस समय इस भूमि में है। परिणाम-स्वरूप यहाँ का व्यक्तित्व समाज में लीन होने की अपेक्षा करके बैठा है। इसलिए संपत्तिदान की माँग होगी, तो संपत्तिदान मिलेगा, बलिदान की माँग होगी तो बलिदान मिलेगा। परंतु यह सब हमको देखना है, प्रत्यक्ष प्रयोग करके। एक दफा यह साबित हो जाय कि जैसे लाखों दान-पत्र भूदान में मिलते हैं, वैसे संपत्तिदान के भी लाख-लाख दानपत्र मिलते हैं, तो तर्कशास्त्र का गढ़-गिर जायगा। आप लोग संपत्तिदान आन्दोलन करें और साथ-साथ भूदान और ग्रामदान भी प्राप्त करें।

—विनोबा

www.vinoba.in

राजनीति बनाम समाज-परिवर्तन

(जयप्रकाश नारायण)

आज सबके दिमाग पर राजनीति का भूत सवार है और लोग सत्ता के द्वारा ही सब कुछ करने-कराने की आशा करते हैं। वे हमसे भी पूछते हैं, "आपने राजनीति तो छोड़ दी, पर काम कितना किया, जरा बताओ तो?" इस तरह आज सत्ता की राजनीति सबके सिर पर सवार है। परंतु हम कहना चाहते हैं कि राजनीति से बुनियादी मसलें हल हो नहीं सकते। इतिहास इसका साक्षी है। अगर राजनीति ही बुनियादी परिवर्तन करा सकती, तो गांधीजी जसे इतने बड़े राजनीतिज्ञ सत्ता को स्वयं हाथ में लिये बिना नहीं रहते, जब कि उनके कारण ही इतने शीघ्र स्वराज्य की प्राप्ति हुई। हमारी स्पष्ट मान्यता है कि गांधीजी के नेतृत्व के कारण जितने शीघ्र हमको स्वराज्य मिला, अन्य किसी नेतृत्व के कारण वह नहीं मिल सकता था। दरअसल हम तो उसके लायक भी अभी नहीं बने थे। लेकिन जिसने आज़ादी निकट ला दी, उसने भी वह सत्ता खुद धारण नहीं की। दूसरी तरफ़, हम देखते हैं कि, अमरीका की आजादी की लड़ाई का नेतृत्व जार्ज वाशिंगटन ने किया और अपने देश का वह पहला शासक बना। रूस में लेनिन ने क्रान्ति की और वह भी पहला प्रधान मंत्री बना। इतिहास में और भी ऐसी मिसालें मिलेंगी, लेकिन गांधीजी ऐसे विलक्षण पुरुष थे कि न तो वे राष्ट्रपति बने, न प्रधान मंत्री ही। वे जिम्मेवारी छोड़कर भाग जाने वालों में से भी नहीं थे। उन्होंने तो विचारपूर्वक ही सत्ता हाथ में नहीं ली। उधर मंत्रिमण्डल बन रहा था, परंतु वे बिहार के गाँवों में और नोवाखाली में धूल फाँक रहे थे। तो आखिर इसका रहस्य क्या है? वे जानते थे कि दिल्ली में बैठकर पार्लमेंट में कानून बनाने से सर्वोदय-समाज का निर्माण नहीं किया जा सकता। समाज को बदलना हो, तो पहले लोगों को बदलना होगा। ईंटों से जैसे मकान बनता है, वैसे लोगों से समाज। ईंटें कमजोर हों, तो मकान का नक्शा चाहे जितना खूबसूरत हो, मकान नहीं टिकेगा। यही गांधीजी का हेतु था। जिन लोगों ने समाज को बदलने का रूढ़ तरीका इस्तेमाल किया, वे मनुष्य को नहीं बदल सके, फलतः समाज भी नहीं बदला और अगर बदला भी तो बहुत थोड़ा और ऊपर-ऊपर से ही।

दुनिया की मिसालें

फ्रांस की राज्यक्रान्ति इतिहास में बड़ी प्रेरक रही है। राजा को वहाँ कत्ल किया गया और अपने झंडे पर लिखा, 'स्वतन्त्रता, समता और भ्रातृत्व।' ज़माना बीत चुका, लेकिन क्या फ्रांस में समता आयी? भ्रातृत्व आया? पूंजीवादी समाज में जितनी समता आ सकती थी, उतनी ही भर आ पायी। नतीजा हमारे सामने है!

रूस में पूंजीवाद और सामन्तवाद मिटाया गया, जार खत्म कर दिया गया, जागीरदारी और पूंजीवादी समाप्त हुए। नेशनलाइजेशन', 'कलेक्टिवाइजेशन' आदि हुए, फिर भी क्या वहाँ क्रान्ति का लक्ष्य पूरा हुआ? सही आजादी जनता को मिली? हमें आज़ाद हुए आठ ही साल बीते, लेकिन आज कोई भी नागरिक चौराहे पर खड़ा रहकर आज़ादी से कह सकता है कि 'पण्डित नेहरू गलत कर रहे हैं, उन्हें हटा दीजिए।' पण्डितजी के खिलाफ प्रभुदत्त ब्रह्मचारी चुनाव में खड़े हुए। क्या रूस में ऐसा हो सकता है? स्टालिन के वक्त विरोध की आवाज उठाना अगर असंभव था, तो ख्रुश्चेव के खिलाफ आवाज उठाना भी आज असंभव है। लेनिन ने कहा था, "हम ऐसा राज्य बनाना चाहते हैं, जहाँ राज्य का ही लोप हो जाय (स्टेट विल विदर अवे)। करीब चालीस साल हुए, आज वहाँ स्टेट अधिक ही सर्वाधिकारी बन गयी है, बलशाली हो गयी है। वहाँ अभी तो मजदूरी में भी समानता नहीं आ पायी! सामान्य मजदूरी तीन सौ रुबल (डेढ़ सौ रुपये) है, तो ऊपर के लोगों को चौबीस हजार रूबल मिलता है। अस्सी गुना अन्तर! इसकी सफाई कुछ भी दी जाय, अस्सी गुना असमानता नतीजे के रूप में सामने है?

'जैसे थे'

अब ज़रा यहाँ की हालत पर भी गौर कीजिये। कांग्रेसवाले, समाजवादी ढाँचे की और राष्ट्रीयकरण की आवाज उठा रहे हैं। रेलों का राष्ट्रीयकरण हुए बरसों बीते। वे राष्ट्र की सम्पत्ति होने के बावजूद भी आज मामूली मजदूर या गैंगमैन को तीस रुपये तनख्वाह और चालीस रुपये महँगाई भर मिलती है, तो जनरल मैनेजर को साढ़े तीन हजार रुपये। इस प्रकार विषमता कायम है, शोषण चल रहा है और अफसरशाही सिर पर सवार है!

कानून बनाम मूल्य-परिवर्तन

गांधीजी बहुत बड़े राजनीतिज्ञ थे। आज के हमारे बड़े-बड़े सत्ताधारी उनके शिष्य हैं। हम सबने उनके चरणों में बैठ कर ही सीखा है। परन्तु गांधीजी न दिल्ली में बैठे, न कानून बनाने में गुंथ गये। इसलिए आमूल परिवर्तन करना हो, तो बुनियाद ही बदलनी होगी और गांधीजी ने कहा है कि बुनियाद व्यक्ति है। व्यक्ति को बदल कर ही समाज बदल सकते हैं। तभी जो विनाशक और असत्य मूल्य हैं, उन्हें भी बदला जा सकता है। स्पष्ट है कि यह मूल्य-परिवर्तन या विचार-परिवर्तन कानून से नहीं हो सकता। आज पंडितजी की ताकत बुलंद है, लेकिन अगर वे कह दें कि सच ही बोला करो, तो क्या हम सब सत्यवादी हरिश्चन्द्र बन जायेंगे? अगर यह हो सकता, तो राजनीति ही सर्वोपरि होती। न धर्म की जरूरत थी, न सन्तों की और न ज्ञानियों की। कानून बनता जाता, हमको हुक्म देते रहता और हम सब आसमान की तरफ उठते चले जाते।

ज़रा मजा देखिये। कानून कहता है, "इनकम्टैक्स दो।" तो फौरन दो-दो बहीखाते बन जाते हैं। कानून कहता है, "लोहा, सिमेंट कंट्रोल से मिलेगा।' ज्यादा दाम देकर आप चाहे जितना चुपचाप खरीद लीजिये। कानून कहता है, "शराब न पियो।" चोरी से शराब ढाली ही जाती है। इसलिए कानून हुक्म से नहीं, जनमत से चलता है। असली काम राजनीति कर ही नहीं सकती। गांधीजी और विनोबा वह राह बता चुके हैं। किसी बच्चे को ग्लोब बता कर आप कहें कि 'जमीन गोल है' और वह कहे, 'जमीन चपटी है' और गुरूजी उसे मारने-पीटने लग जायँ, तो क्या वह जबरदस्ती मान लेगा? उसे आहिस्ता ही प्रेम से समझाना होगा। इसलिए असली काम विचार-परिवर्तन का है, मूल्य-परिवर्तन का है। भूदान-आंदोलन मूल्य-परिवर्तन की ही क्रांति है। यह विचार-परिवर्तित करने का एक जन-आंदोलन है, जिसका प्रोग्राम है, जमीन, धन और श्रम का एक हिस्सा तुरंत माँगना। विचार समझा कर ही यह माँगा जा सकता है, माँगा जा रहा है। **विचार का परिवर्तन किये बिना दूसरे रास्तों से समाज के परिवर्तन की बात करना अकल्याणकारी है।**

भूमि तो गोपाल की सब–

('दिनेश')

भूमि केवल माँगता हूँ मैं नहीं
माँगता हूँ मैं तुम्हारा प्यार।
भूमि तो गोपाल की सब
तुम उसे क्या दान दोगे?
मानते अपनी उसे, बस—
त्याग यह अभिमान दोगे
थक चुके उड़ दंभ-नभ में, मैं तुम्हें—
दे रहा हूँ ज्ञान का आधार।
भूमि केवल माँगता हूँ मैं नहीं
माँगता हूँ मैं तुम्हारा प्यार॥
दान, फैलाकर भुजाएँ
जो दुखी उनको उठाओ।
दान, जो नर मर रहे
प्राण दे उनको बचाओ।
दान केवल चाहता हूँ मैं नहीं
चाहता हूँ भाव का विस्तार।
भूमि केवल माँगता हूँ मैं नहीं
माँगता हूँ मैं तुम्हारा प्यार॥
त्याग दो वे भावनाएँ
व्यष्टि में जो बाँधती हैं।
त्यागें दो वे कामनाएँ
जो न सीमा जानती हैं।
जल किनारों का कभी क्या बन सका
बँध सकी उनसे कभी क्या धार?
भूमि केवल माँगता हूँ मैं नहीं,
माँगता हूँ मैं तुम्हारा प्यार॥

www.vinoba.in

विनोबाजी के साथ प्रश्नोत्तर

प्रश्न: क्या आप कृपा करके (अ) ईश्वर और मनुष्य में कैसा संबंध है, (आ) मनुष्य और मनुष्य में कैसा संबंध होना चाहिए और (इ) भाईचारा बढ़ाने के लिए मनुष्य की चाल-चलन के क्या नियम होने चाहिए; इन विषयों के संबंध में अपना निश्चित मत बतलायेंगे?

ईश्वर और मनुष्य के संबंध

विनोबा: आपके पहले प्रश्न के विषय में यह कहना चाहिए कि ईश्वर के साथ मनुष्य का नाता शब्दों से परे है। उस रहस्यमय संबंध का वर्णन कोई शब्द नहीं कर सकेंगे। हर एक के जीवन के अनुभव पर वह निर्भर होता है। जिसके जीवन में माता के प्रेम का अनुभव हो, वह ईश्वर को माता के रूप में देखेगा। जिसने अपने जीवन में भाई के प्रेम का अनुभव किया हो, वह ईश्वर को भाई के रूप में देखेगा। इस प्रकार अलग-अलग मनुष्य अपने-अपने अनुभवों के मुताबिक, ईश्वर को भिन्न-भिन्न रूपों में देखेंगे। परंतु मेरे लिए तो उस संबंध का सबसे अच्छा वर्णन आग और चिनगारी की मिसाल से होगा। ईश्वर अग्नि है और मनुष्य तथा दूसरे सारे प्राणी, उस अग्नि के स्फुलिंग हैं। मैं मानता हूँ कि इसमें आपके सवाल का पूरा-पूरा जवाब नहीं आता। फिर भी मैंने अपनी तरफ से अधिक से अधिक कोशिश की।

मनुष्य-मनुष्य के संबंध

मनुष्य का मनुष्य के साथ कैसा संबंध हो, यह आपका दूसरा सवाल है। मनुष्य-मनुष्य का संबंध हमेशा भाईचारा कहलाता है। हम हर मनुष्य को अपना भाई समझते हैं। लेकिन हम देखते हैं कि भाई-भाई लड़ते हैं और दोनों एक ही हक के दावेदार होते हैं, इसलिए शायद ज्यादा लड़ते हैं। यदि हम हकों का दावा छोड़ दें और सिर्फ मित्र बन जायँ, तो वह रिश्ता बेहतर होगा। **मैं 'भाई' शब्द की बनिस्बत 'मित्र' शब्द को ज्यादा पसंद करता हूँ। मित्र हकों का दावा नहीं करते, वे अपना कर्तव्य अदा करते हैं। लेकिन भाई कर्तव्य और अधिकार का दावा, दोनों करता है।**

चाल-चलन के नियम

आपके तीसरे सवाल के बारे में कई तरह के नियम बतलाये जा सकते हैं। लेकिन मैं उनमें सिर्फ तीन चुन लेता हूँ। (१) सचाई या ईमानदारी, (२) प्रेम, और (३) आत्मसंयम। चाल-चलन के ये तीन मुख्य नियम हैं।

आत्म-संयम

प्रश्न: क्या आत्म-संयम से मतलब आत्मानुशासन है?

विनोबा: हम अपने लिए जो स्वतंत्रता चाहते हैं, वह स्वतंत्रता दूसरों को भी हमें देनी चाहिए। इसके लिए संयम की आवश्यकता होती है।

प्रश्न: उपासना में संगीत का क्या स्थान हो, इसके बारे में अगर आप कुछ कहें, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

संगीत : आत्मोद्गार

विनोबा: संगीत दो तरह का होता है। एक तो वह संगीत है, जो हम रेडियो पर सुनते हैं, जिसमें शब्द और ध्वनि अधिक प्रकट होती है। दूसरा संगीत वह है, जो हमारे अंतःस्तल में से निकलता है और जिससे हमारे आत्मा की वास्तविक अभिव्यक्ति होती है। मनुष्य को जब आनंद होता है, तो वह गाना चाहता है। फिर उसे किसी सुननेवाले की दरकार नहीं होती। वह अपने संतोष के ही लिए गाता है। यही बात भक्ति की भी है। हृदय जब भक्ति से छलकने लगता है, तो मनुष्य नाचने लगता है। यह सब हमारी आत्मा के उद्गार हैं, दूसरी किसी तरह से हम इनको व्यक्त नहीं कर सकते। इसमें न तो तर्क है और न बुद्धिवाद। यह सहजस्फूर्त प्रतिभा है।

करुणा का राज

प्रश्न: मनुष्यों की एकता और बंधुत्व का प्रतिपादन करने वाला क्या कोई वचन धर्म-ग्रंथों में है? क्या ऐसे कोई प्रेरणादायी उद्गार किसी के हैं?

विनोबा:—वेदों में एक ऐसा वचन है, जो दूसरे सभी उद्गारों से अधिक प्रेरणादायी रहा है। वह है, 'एकं सत् विप्राः बहुधा वदन्ति'—सत्य एक ही है, परंतु विद्वान् उसका वर्णन अनेक तरह से करते हैं। सत्य के कई पहलू हैं। किसी भी एक पहलू को लीजिये, तो उसकी अभिव्यक्ति में भेद रहेगा। परंतु सत्य के इन नानाविध प्रकट रूपों में संवादित्व होता है। ऊपर-ऊपर से देखने में वे इतने अलग-अलग मालूम होते हैं कि उनमें कोई मेल नहीं दिखायी देता। फिर भी उनमें विसंवाद नहीं होता, क्योंकि सत्य एक ही है। वहाँ विविधता में एकता होती है। सारी विविधताएँ एक केंद्रबिंदु में आकर मिलती हैं, क्योंकि एक ही आत्मा से वे सब निकलती हैं। ये सारे पहलू एक ही समग्र के अनेक अंश हैं।

मैं अक्सर 'करुणा का राज्य' शब्द-प्रयोग पसंद करता हूँ। बाईबल में ईश्वर के राज्य का उल्लेख है, परंतु मुझे 'करुणा का राज्य' शब्द अधिक प्रिय है। आज के समाज में भी करुणा तो विपुल है। परंतु करुणा का राज्य नहीं है, क्योंकि आज का समाज प्रतिस्पर्धा की नींव पर खड़ा है। हम ऐसा समाज चाहते हैं, जिसकी बुनियादें सहयोग, पारस्परिक प्रेम और करुणा पर रखी गयी हों। इस आंतरिक करुणा के बिना हम समाज में जैसा परिवर्तन करना चाहते हैं, वैसा परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। हम सर्वोदय चाहते हैं। **सर्वोदय से मतलब ज्यादा-से-ज्यादा तादाद की ज्यादा से ज्यादा भलाई नहीं है, बल्कि सबकी भलाई है।** ज्यादा से ज्यादा तादाद की ज्यादा-से-ज्यादा भलाई में से अल्पसंख्या और बहुसंख्यावाद पैदा हुआ। हमें इस 'बहुसंख्या' को 'सर्व' में बदल देना है। हम मनुष्य को यह समझा देना चाहते हैं कि व्यक्ति का हित समाजहित में है और समाज का हित व्यक्ति के हित में है। इन दोनों में कोई अदावत नहीं है। इसके लिए मुख्य चीज करुणा है। इसीलिए मैंने कई बार कहा है कि बाहरी दबाव से जो दान दिया जाता है, वह करुणा का राज्य कायम करने के लिए उपयोगी साबित नहीं होगा। वह अंतःकरण की संपूर्ण भावना से दिया जाना चाहिए, तब उस दान से समाज का रूप ही बदल जायेगा। सिर्फ देने की क्रिया तो चाहे जिस नीयत से हो सकती है। असली महत्त्व भावना का है।

हम प्रेम और करुणा से दिया हुआ दान चाहते हैं, इसीलिए मैंने प्रेम, दया और करुणा पर ज़ोर दिया है। कितनी ही बार मैंने कहा है कि किसी दबाव के कारण दान मत दीजिये। न तो मेरे पास सत्ता है और न मेरा प्रेम के सिवा और किसी सत्ता में विश्वास ही है। आज दुनिया में कितने ही सत्ता के गिरोह हैं।

प्रश्न: क्या ये सत्ता के गिरोह प्रेम से मिटाये जा सकते हैं?

विनोबा: इन गिरोहों को एक-दूसरों के साथ प्रेम की होड़ लगानी चाहिए।

प्रश्न: क्या आपकी सारी सिखावन का बीजमंत्र प्रेम है?

विनोबा: सच तो यह है कि यह मेरी सिखावन नहीं है। यह तो पुराना मंत्र है। अनादि परंपरा से जो मंत्र चला आया है, उसका मैं एक छोटा-सा अनुयायी हूँ। यह उन सब सयाने पुरुषों की सिखावन है, जिनका हम आदर तो बराबर करते हैं, लेकिन अनुवर्तन कभी नहीं करते।

(ता० १७ अप्रैल, १९५६ को आंध्र देश के कडाप्पा जिले के जमालमाडुगु तालुके में देवगुडी पडाव पर अमेरिका की एक महिला श्री लाउरा बौल्टन विनोबा से मिलीं। उनके साथ अंग्रेजी में जो प्रश्नोत्तर हुए, उनका सारांश यहाँ दिया जाता है। —सं०)

···बहुत दफा लोग पूछते हैं कि आप ईश्वर का नाम लेते हैं, तो ईश्वर की क्या व्याख्या है? ईश्वर याने सत्य और प्रेम। ये दोनों जहाँ भी इकट्ठे हो गये, वहाँ ईश्वर प्रकट हो गया। भूदान के काम में सत्य और प्रेम, दोनों प्रकट होते हैं। गाँव के भोले-भाले लोग समझते हैं कि ईश्वर याने चार हाथों वाला। उनकी बात सही है। जहाँ हमारे दो हाथ, सामने वाले के दो हाथों के साथ इकट्ठे होते हैं, वहाँ ईश्वर प्रकट होता है। ईश्वर पाँच सिर वाला भी माना जाता है। उसको पंच याने पंचायत कहते हैं। कहावत है कि "पंच-बोले परमेश्वर।" तेलुगु में कहावत है—"जहाँ दस लोग इकट्ठे होकर प्रेम से सत्य बात कहते हैं, तो वहाँ परमेश्वर होता है।" दस मनुष्य चोरी के लिए इकट्ठे होते हैं, तो वहाँ ईश्वर प्रकट नहीं होता। सच्चे काम के लिए जब प्रेम से इकट्ठा होते हैं, तब ईश्वर प्रकट होता है। वैसे आजकल भक्ति का नाम तो लेते हैं, लेकिन झूठ बोलते रहते हैं और कहते हैं कि ईश्वर की कृपा हो। जहाँ झगड़ा होता है, वहाँ ईश्वर प्रकट नहीं होता है, राक्षस प्रकट होता है। इसलिए जहाँ परस्पर-प्रेम और सत्यनिष्ठा प्रकट होती है, वहाँ ईश्वर की आज्ञा मूर्तिमंत होती है।···

—विनोबा

---

www.vinoba.in

आंदोलन का सिंहावलोकन

[सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री, सर्व-सेवा-संघ, गया]

भूदान-यज्ञ-आंदोलन को शुरू हुए पांच वर्ष पूरे हुए हैं। अप्रैल, १९५१ में इसकी शुरुआत हुई। १९५२ के अप्रैल में सेवापुरी के सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर सर्व-सेवा-संघ ने श्री विनोबाजी की इच्छा से आंदोलन को देशव्यापी रूप से संगठित करने की जिम्मेवारी उनके नेतृत्व में अपने ऊपर ली। उस सम्मेलन में यह संकल्प भी किया गया कि दो वर्ष के अंदर देश भर में पचीस लाख एकड़ जमीन भूदान में प्राप्त की जाय। सन् १९५४ के बोधगया-सम्मेलन के पहले अर्थात् निर्धारित अवधि के अन्दर यह संकल्प एक तरह से पूरा हुआ।

टोटल वार बनाम टोटल चेंज !

उधर विनोबाजी की अखंड पदयात्रा चलती रही। बिहार की कुल जमीन का छठा हिस्सा यानी बत्तीस लाख एकड़ प्राप्त करने का लक्ष्य जाहिर हुआ। वह भी बहुत हद तक सफल हुआ। १९५७ तक हिंदुस्तान की भूमि-समस्या भूदान-आंदोलन द्वारा हल होनी चाहिए, अर्थात् देश भर में जमीन का न्यायोचित बँटवारा उस समय तक संपन्न हो जाना चाहिए, यह उद्घोष भी हुआ। एक ओर इस लक्ष्य की प्राप्ति को दृष्टि में रखते हुए तथा दूसरी ओर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में तेजी से बढ़ती हुई हिंसा की शक्तियों को ध्यान में रखते हुए मार्च, १९५५ के पुरी-सर्वोदय-सम्मेलन में सर्व-सेवा-संघ ने इस स्थिति को सर्वोदय तथा अहिंसा में निष्ठा रखने वाले सभी व्यक्तियों के लिए एक चुनौती के रूप में माना और उन्हें आवाहन किया कि "वे अन्य सभी कार्यों को छोड़ कर भूदान-यज्ञ में अपनी सारी वृद्धि, शक्ति और कार्य-कुशलता समर्पण करें।" श्री जयप्रकाश नारायणजी ने एक वर्ष पहले बोधगया-सम्मेलन में ही 'भूदान-यज्ञ-मूलक इस अहिंसक क्रांति' को एक-दो बरस में पूरा हो जाने वाला नहीं, बल्कि जीवन भर का काम मानकर इसके लिए 'जीवन-दान' किया था। इस तरह सन् '५७ के तात्कालिक लक्ष्य और समूची समाज-रचना तथा जीवन-मूल्य बदलने के अंतिम लक्ष्य, दोनों ही दृष्टियों से भूदान-यज्ञ संकुल-युद्ध'—टोटल वार' की तरह एक संकुल-परिवर्तन 'टोटल चेंज'—के आंदोलन के रूप में प्रगट हुआ।

यों तो भूदान-यज्ञ-आंदोलन के स्वरूप, उसकी दिशा और कार्य-क्रम के बारे में स्वाभाविक तौर पर पिछले पाँच वर्ष के दौरान में कई बार सर्व-सेवा-संघ की बैठकों में तथा भूदान-संयोजकों की सभाओं में चर्चा होती रही है, पर पुरी-सम्मेलन के उपरोक्त आवाहन के बाद इस पिछले एक वर्ष में यह एक व्यावहारिक महत्त्व का प्रश्न बन गया, क्योंकि सन् '५७ की मर्यादा का समय निकट आता गया। सन् '५७ तक गाँव-गाँव में अगर जमीन का बँटवारा हो जाना है, तो जाहिर है कि यह आंदोलन जल्दी-से-जल्दी एक जन-आंदोलन—"मास मूवमेंट" बन जाना चाहिए। उधर विनोबाजी की अखंड पदयात्रा में पुरी के बाद उड़ीसा में ग्रामदान का सिलसिला लग गया। जमीन के छठे हिस्से के दान से शुरू होकर गाँव की कुल जमीन गाँव को समर्पण करने, अर्थात् उस पर से व्यक्तिगत मालकियत खतम होकर जमीन का ग्रामीकरण होने तक की प्रक्रिया पूर्णता को पहुँची। पर देश भर में भू-क्रांति संपन्न होने के लिए जिस प्रकार के व्यापक वातावरण की अपेक्षा है, वह वातावरण किस प्रकार बने, यह विचार का मुख्य विषय बना रहा।

सितंबर, १९५५ के आखिरी सप्ताह में कुजेंद्री (उड़ीसा) में श्री विनोबाजी से इस विषय पर विचार-विनिमय हुआ। बाद में दिसंबर, १९५५ की सर्व-सेवा-संघ की बेज़वाड़ा की बैठक में इस प्रश्न पर विस्तार से चर्चा हुई। मार्च, १९५६ में फिर जब संघ की प्रबंध-समिति की बैठक आदोनी (आंध्र) में श्री विनोबाजी की उपस्थिति में हुई, वहाँ भी इस प्रश्न पर चर्चा हुई। आगामी सम्मेलन के अवसर पर इस विषय के विचार-विनिमय में उपयोगी हो, इस दृष्टि से इन चर्चाओं का सार नीचे दिया जा रहा है।

श्री विनोबाजी ने बतलाया कि भूदान के काम की ओर देखने की तीन दृष्टियाँ हैं:

भूदान की तीन दृष्टियाँ

पहली तो यह कि भूदान में कुछ भूतदया का काम होता है और गरीबों को जिस राहत की जरूरत है, वह निश्चित रूप से और तुरंत दी जा सकती है। जिस देश में दुःख भरा पड़ा हो, वहाँ दुखियों को समाधान देने का काम भी गौण या अनादरणीय नहीं है। उसकी अपनी एक स्वतंत्र कीमत है।

भूदान का दूसरा पहलू यह है कि उसके जरिये हम समाज की रचना बदलना चाहते हैं। जीवन-परिवर्तन की बनियाद इस काम में डाली जाती है।

तीसरी बात यह है कि इस काम के जरिये हम समाज में नैतिक साधनों की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। समाज के सब मसले अहिंसा से, नैतिक साधनों से हल हो सकते हैं, यह श्रद्धा अभी लोगों के मन में नहीं जमी है। साधारण रीति से अहिंसा की बात में सब सम्मति देते हैं, पर जब किसी विशिष्ट मसले को हल करने का सवाल आता, है, तो हिंसा करना उचित है, ऐसा भी लोग मानते हैं। भूदान-आंदोलन में नैतिक साधनों का आग्रह रख कर हम समाज में यह निष्ठा पैदा करना चाहते हैं कि अहिंसा से समाज के सब मसले हल हो सकते हैं। यह भूदान-आंदोलन का तीसरा और मुख्य पहलू है। आदोनी की बैठक के समय फिर श्री विनोबाजी ने इस बात पर जोर दिया कि अहिंसा की शक्ति में लोगों का विश्वास कैसे बढ़े, यही हमारी मुख्य समस्या है। भूदान-यज्ञ-आंदोलन इस उद्देश्य की पूर्ति का एक साधन है।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए आंदोलन को आगे बढ़ाने के संबंध में विनोबाजी ने नीचे लिखे सुझाव दिये:—

(१) हमारे जो कार्यकर्ता आदि लोगों के पास जायँ, उनको ऊपर बतलाये हुए नैतिक इत्यादि पहलुओं की पूरी समझ हो। उनका जीवन भी उसके अनुकूल हो। ऐसे ही प्रचारकों के जरिये यह काम फैल सकेगा। अतः पहली चिंता हमें इस बात की करनी चाहिये। (२) दूसरी चिंता हमें यह रखनी चाहिये कि आंदोलन पक्षातीत रहे। मदद तो हम सब पक्षों के लोगों की लेंगे और लेनी चाहिये, पर आंदोलन को पक्षातीत रखना चाहिये। इसे दृष्टि में रखते हुए यह आवश्यक है कि भूदान-संयोजक राजनैतिक पार्टियों के सक्रिय कामों से तथा सब प्रकार के चुनावों से अलग रहें। न खुद खड़े हों, न प्रचार करें। पूरे समय के भूदान-कार्यकर्त्ताओं के लिए तो यह पहले से ही लागू है। (३) तीसरी बात हमको यह सोचनी है कि किस तरह गाँव-गाँव में जमीन का बँटवारा हो। एक दिन मुकर्रर किया और उस दिन सारे देश में जमीन बँट जाय, तो वह क्रांति होगी। अगर ऐसा काम हमें करना है, तो कोई एक विशेष संस्था ही काम करे, उसकी बजाय आंदोलन को लोगों पर छोड़ना चाहिये। हम जाहिर कर दें कि अब हमें नहीं, लोगों को सब कुछ करना है। हममें से जो इस काम के लिए घूमने वाले हैं, वे तो घूमते ही रहेंगे। इसका यह परिणाम भी आ सकता है कि सारा आंदोलन शायद ठप भी हो जाय।

(४) ऐसी स्थिति में यह प्रश्न भी उठता है कि भूदान-समितियाँ आदि आंदोलन के जो स्थूल साधन हमने बनाये हैं, उन्हें क्या हम समाप्त कर दें? या क्या हम यह करें कि हर प्रांत में सर्व-सेवा-संघ की एक शाखा हो और प्रांत भर में भूदान-संबंधी जो कुछ औपचारिक काम हों, यथा, दान-संग्रह, साहित्य-प्रचार आदि, वह उसके मार्फत होते रहें या एक ही दफ्तर रहे और बाकी की समितियाँ आदि सब खतम कर दी जायँ? संगठन-संबंधी दूसरा विकल्प यह भी हो सकता है कि प्रांतीय भूदान-समितियाँ भले ही रहें, पर दूसरी सब तोड़ दी जायँ। तीसरा विचार यह कि संयोजक रहें और दूसरे जो लोग उनके साथ हैं, उनको छोड़ दिया जाय। इत्यादि कई विकल्प हो सकते हैं। इन पर विचार कर लेना चाहिए।

"संगठन के संबंध में दूसरा प्रश्न अर्थ का है। जब जन-आंदोलन बनता है तो उसके साधन भी जनता से मिल सकते हैं और संचित-निधि का आधार छोड़ा जा सकता है। पर इस बात पर हम ज्यादा जोर नहीं देते। आप लोग सोचें।"

जन-आंदोलन कैसे बने ?

श्री शंकररावजी ने कहा-**"अगर हम सन् '५७ तक आर्थिक क्रांति करना चाहते हैं, तो हमें 'मास ऐक्शन' का एक प्रोग्राम देश के सामने रखना चाहिये और लोगों को कहना चाहिये कि यह प्राप्ति और वितरण का काम तुम्हीं को करना है। अब तक हमारा आंदोलन आखिरकार एक व्यक्तिगत यानी 'इंडिविज्युअल ऐक्शन' का ही रहा है। सन् '५७ तक हम पाँच करोड़ एकड़ जमीन इकट्ठी करने की बात करते हैं, तो वह भी एक प्रक्रिया हो जाती है, 'प्रोसेस' होता है। वह क्रांति नहीं होती।"** विनोबाजी ने 'भूदान-आंदोलन एक शुद्ध नैतिक आंदोलन है, इस बात पर जोर दिया है, उसका जिक्र करते हुए श्री शंकररावजी ने आगे बतलाया—"यह सही है कि ऐसे शुद्ध नैतिक आंदोलन का आधार, उसकी शक्ति, सत्वगुण ही हो सकती है। पर सर्व-साधारण जनता के लिए ऐसा सत्वगुण-प्रधान नैतिक आंदोलन एक प्रेरक शक्ति बने, यह कोई आसान काम नहीं है। आम तौर पर लोगों को सत्वगुण अपील तो करता है, लेकिन कर्मप्रेरक शक्ति जन-साधारण के लिए रजोगुण में ही ज्यादा होती है। इस दृष्टि से भूदान-आंदोलन के जन-आंदोलन बनने में कुछ गुण-मर्यादा और काल-मर्यादा भी आ जाती है। जन-आंदोलन बनने पर सत्वगुण की हानि का खतरा है। पर अगर हम सन् '५७ की बात करते

www.vinoba.in

हैं, तो यह खतरा उठा कर भी हमें लोगों को, खास कर भूमिहीनों को और जिनके पास बहुत कम जमीन है उनको, 'मास ऐक्शन' का प्रोग्राम देना चाहिए। गांधीजी ने 'क्विट इंडिया' के समय ऐसा खतरा लिया था।"

जन-आंदोलन के लिए प्रेरक शक्ति रजोगुणी ही हो सकती है, इस बात पर बाद में श्री विनोबाजी ने कहा कि तात्त्विक अर्थ में सत्त्व, रज, तम—तीनों की सामान आवश्यकता है और उस अर्थ में वे रजोगुण के विरुद्ध नहीं हैं। उन्होंने कहा, **"हम भी चाहते हैं कि जोरदार कर्म-प्रेरणा हो, रजोगुण का इंजिन तो हो, लेकिन सतोगुण की पटरी हो। तात्पर्य यह है कि आन्दोलन का जो नेतृत्व होगा, उसकी जिम्मेवारी यह रहेगी कि प्रजा का सारा रजोगुण पूरे जोरों के साथ, लेकिन हमारी निश्चित पटरी पर चले।"**

क्रांति का अर्थ

श्री जयप्रकाश नारायणजी ने हिंसक और अहिंसक क्रांति का भेद बतलाते हुए कहा कि हिंसक क्रांति में जो दबे हुए लोग होते हैं, उनके अंदर एक स्वाभाविक प्रेरणा होती है कि वे उस दबाव से, उस अन्याय से और शोषण से मुक्ति प्राप्त करें। अहिंसक क्रांति का स्वरूप मुख्यतया यह है कि जो लोग दबे हुए हैं, वे नहीं, बल्कि जो आज दूसरों को दबा रहे हैं, वे लोग बदल जायँ, उनके अंदर परिवर्तन हो जाय और उन्हें ऐसी प्रेरणा हो कि वे दूसरों का दबाया हुआ हक छोड़ दें। अब यह विचार आपसे आप लोगों के मन में पैदा हो जायगा, ऐसी बात तो नहीं है। लोगों को यह समझाना पड़ेगा और समझाने की प्रकिया भी अहिंसक होगी। तो फिर मुख्य आवश्यकता इस प्रकार समझाने वालों की है। कहीं भूमिहीनों का संगठन हुआ, उन्होंने माँग पेश की और उससे डर कर भूमिवानों ने जमीन छोड़ दी, तो वह काम दीखने में शांतिमय भले ही हो, पर हम यह नहीं कह सकेंगे कि अहिंसक क्रांति हो गयी! याने भूमिवानों के विचारों का परिवर्तन हुआ और उन्होंने समझ लिया कि यह हमारा नहीं, समाज का है, अतः उसे दे डालना हमारा कर्तव्य है। अब तक हमने काफी विचार-प्रचार किया है। परंतु एक दिन हम निश्चित कर दें और उस दिन सारे गाँवों के लोग आपस में जमीन का बँटवारा कर लें, ऐसी स्थिति अभी नहीं आयी है। **यह सही है कि क्रांति वही होती है, जब जनता अपने-आप चारों तरफ एक काम को कर लेती है। ऐसी परिस्थिति लाने की हमें कोशिश करनी चाहिये।**

श्री जयप्रकाशजी ने आगे के कार्यक्रम के संबंध में दो-तीन बातों पर मुख्यतया जोर दिया। पहली बात निष्ठावान् कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ाने की। गाँव-गाँव से ऐसे जीवनदानी कार्यकर्ता मिलें, जो अपने निर्वाह का काम करते हुए आंदोलन के काम को आगे बढ़ाते रहें। उनमें विचार की दृढ़ता हो और आंदोलन के प्रति श्रद्धा हो। उनके लिए कुछ मोटी-मोटी शर्तें भी तय कर दी जायँ, जैसे गांधीजी ने सत्याग्रहियों के लिए एक मोटी परिभाषा बनायी थी। गाँव-गाँव में ऐसे जीवनदानी निकलें। इसके अलावा सतत काम करने वाले निष्ठावान् कार्यकर्ताओं की संख्या भी बढ़नी चाहिए। उनका संगठन क्या हो, निर्वाह-खर्च कहाँ से आये, इत्यादि तफसील की बातें हैं, जो सोची जा सकती हैं।

राजनीतिक योजनाए और सर्वोदय

श्री जयप्रकाशजी ने दूसरी बात यह कही कि आज देश की राजनीति पर अर्थात् राज-काज पर सर्वोदय-विचारवालों का प्रत्यक्ष प्रभाव नजर नहीं आ रहा है। हम सर्वोदय, स्वावलंबन इत्यादि की बातें तो करते रहते हैं, पर देश में जो योजनाएं बन रही ह, वे सब दूसरे ही किस्म की हैं। **जब तक हमारे काम का और विचार का असर प्रत्यक्ष देश की गतिविधि पर नहीं पड़ता है, तब तक जनता में सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठा नहीं होगी।** तो, हमें ऐसा कोई ढंग अपनाना चाहिए, जिससे देश की राजनीति पर सर्वोदय का प्रभाव पड़े।

तीसरी बात उन्होंने यह कही है कि आंदोलन को जल्दी जन-आधारित बनाया जाय, जनता स्वयं इस काम को उठा ले। भूमिहीनों की शक्ति किस प्रकार हम प्रगट करें, इस तरफ भी ध्यान दें। लेकिन हमारी क्रांति का मुख्य स्वरूप तो वही होना चाहिए कि जिनके पास कुछ है, वे यह मान लें कि यह सब कुछ समाज का है। इसके लिए गाँवों में जो दाता हैं, उन पर हमको वितरण का काम छोड़ना चाहिए, जिससे कि उनके विचार बदलने में भी मदद मिल सके।

श्री दादा धर्माधिकारीजी ने भी इस बात पर जोर दिया कि हमारी क्रांति में वर्ग-विशेष का संगठन नहीं हो सकता। अहिंसक क्रांति में वर्ग-निराकरण की बात है, लेकिन इसमें कोई किसीका प्रतिपक्षी नहीं है। केवल प्रतिकारात्मक आंदोलन से हमारा मकसद भी हासिल नहीं होगा। अतः हम जो क्रांति करना चाहते हैं, उसमें मुख्य बात है, उत्पादन की, याने काम की प्रेरणा बदलने की है। पूंजीवादी समाज में उत्पादन की प्रेरणा—"इनसेंटिव" मुनाफे की होती है। **शोषणहीन समाज में यह प्रेरणा, सामाजिक प्रेरणा होनी चाहिये।** इसलिए हम क्रांति में सबका आवाहन करें, जन-आंदोलन की ओर बढ़ें, लेकिन आवाहन किसलिए करें, यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिए। **यह आवाहन जमीन पर या अन्य साधनों पर कब्जा करने के लिए नहीं होगा, बल्कि जमीन का कब्जा छोड़ने के लिए और आगे चल कर सारी जमीन गाँव को दे देने के लिए यह सामाजिक प्रेरणा है।**

आंदोलन को स्थानीय दान के आधार पर छोड़ देने के बारे में दादा धर्माधिकारी जी ने चेतावनी दी कि 'इससे आंदोलन चाहे तंत्र-मुक्त भले हो जाय, लेकिन उसके संपत्ति के आधीन हो जाने का खतरा है। अगर यह खयाल हो कि जो स्थानीय संपत्तिदान लिया जायगा, वह आखिर जायगा एक दफ्तर में और फिर वहाँ से कार्यकर्ता को दिया जायगा, तब तो वह निर्वाह-व्यय गांधी-निधि से आता है या स्थानीय निधि से, इसका कोई खास महत्त्व नहीं रह जाता। पर अगर आप कार्यकर्ता से यह कहते हैं कि जहाँ पर वह काम करता है, वहीं से अपना निर्वाह जुटा ले, तब कार्यकर्ता को यह चिंता हो जायगी कि चाहे संपत्तिदान मिले या न मिले, उसका निर्वाह अवश्य चलना चाहिए। यह उचित नहीं होगा।

उपरोक्त मुद्दों पर हमें आगामी सम्मेलन के समय गंभीरता से विचार करके आगे के काम की दिशा निश्चित करनी चाहिए।

ग्राम नगर वन सभी स्थान पर शांत संयमी ज्ञानी बन कर।
शांति-मार्ग के पाने में तू गौतम! कर न प्रमाद समय भर॥

* * *

वित्तभूमौ प्रयत्नेन पोषितैवं निरन्तरम्।
सद्विचारकृषिः कृषिः संस्कृतिर्वि मता बुधैः॥

—भगवान् मह वीर

सर्वोदय-समाज: विदेशों में

[सर्वोदय-विचार अब भारतीय सीमाओं को लाँघ कर आंतरराष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण कर रहा है। भौतिकवादी यूरोप के विचारक भी सर्वोदय-विचार में गहरी दिलचस्पी लेने लगे हैं। अपने विदेशी मित्रों के कुछ पत्र गतांकों में हम प्रकाशित कर चुके हैं। नीचे जर्मनी की एक बहन का सर्वोदय-समाज के नाम लिखित पत्र हम दे रहे हैं। आंतरराष्ट्रीय संदर्भ में सर्वोदय-विचार की महत्ता इस पत्र से प्रगट होती है।—सं०]

सर्वोदय-समाज के कुल सदस्यों के साथ विचारों का आदान-प्रदान ही इस भाईचारे को विकसित करेगा और इससे भी ज्यादा महात्मा गांधी के विचारों को इस जगत् में साक्षात् कर सकेगा।

विचार-विनिमय के लिए सदस्य एक-दूसरे के साथ प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करें, यह भी शायद संभव होगा और एक-दूसरे के कार्य में मदद भी प्राप्त हो सकेगी।

मैं पहले लिख चुकी हूँ कि मैं एक मनोवैज्ञानिक हूँ और यह ध्यान में रखते हुए मैं नवयुवकों को सही शिक्षा देने में अपना मुख्य कार्य देखती हूँ। युवक ही हमारा भविष्य है और जगत् की आशा है। सत्य और अहिंसा के आदर्शों के लिए एक अच्छी नींव तैयार करना बहुत महत्त्व का कार्य है। जहाँ आत्म-शक्ति का अभाव महसूस होता है, वहीं शारीरिक शक्ति के बारे में सोचा जाता है।

लेकिन मैं अपने पति के साथ और भी सभी वास्तविक समस्याओं के बारे में चर्चा करती रहती हूँ। उनको सही तरीके से कैसे हल किया जाय, यह भी सोचती हूँ। मसलन्, मैंने अपने पिछले एक पत्र में लिखा था कि हमारी इस समय की तीव्र इच्छा यही है कि द्विखंडित जर्मनी को किस तरह एक किया जाय। अब हम उन चार प्रराष्ट्रीय मंत्रियों को अपील करते हैं कि वे हमारे देश को पुनः एक बनाने के लिए पूरा प्रयत्न करें।

सर्वोदय-समाज की कल्पना को गति देने में मुझ से ज्यादा और किसको आनंद हो सकता है?

भवदीया,
ट्राउट केजवेट्टर

नोट—सर्वोदय-समाज का कोई सेवक या मित्र अगर जर्मनी आना चाहे, तो मेरा आतिथ्य वह ग्रहण करे। इससे मुझे बड़ी खुशी होगी।

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

मई १८ सन् १९५६

लोकनागरी लिपि :

हम कीसे खोज रहे हैं ?

सामूहीक अुत्थान का भी अेक शास्त्र हैं। वह शास्त्र पूरा तो हम भी नहीं जानते, परंतु वह हैं और अनुभव से अुसका ज्ञान बढ़ता हैं। लेकीन आज जीतना ज्ञान अुपलब्ध हुआ हैं, अुसपर से हम कह सकते हैं की हींदुस्तान में अेक अैसी हवा मौजूद हैं, जीसका पूरा लाभ हमको मील सकता हैं। सामूहीक अीच्छाशक्ती कीस तरह जागृत करें, यही मुख्य सवाल हैं। वह केवल तीव्र चींतन और पूर्ण नीरहंकार बुद्धी से होती हैं। अगर हमारे हृदय में कोअी अहंकार नहीं हैं, हम शून्य हैं और केवल कल्याण की कामना करते हैं, तो अुसकी प्रतीध्वनी सबके हृदय में अुठती हैं, सद्कामना सबके हृदयों में जग जाती हैं और फीर वह सामूहीक बनती हैं। अीस तरह नीरहंकार कामना नीष्पक्ष भी होती हैं। अीन दीनों लोगों में कअी पक्ष चल रहे हैं और लोग अुन-अुन पक्षों में बंटे हुअे हैं। पंथ भी अनेक हैं। अगर हम चाहते हैं की कोअी अेक सद्भावना सब लोगों के हृदय में प्रवेश करे, तो हमको पक्ष, पंथ और सब प्रकार के भेदों से मुक्त होना चाहीअे। अीस तरह सर्वपक्ष-रहीत और केवल भूतहीत की सद्भावना नीरहंकार वृत्ती से हृदय में प्रकट होती हैं, तो सबके हृदय में अुसका रूप प्रतीबींबीत होता हैं और अैसी सद्कामना जब सामूहीक होती हैं, तो अुसका परीणाम प्रत्येक कृती में शीघ्र से शीघ्र होता हैं। अीसलीअे हमारी मुख्य कोशीश यही हैं की सबके हृदय में अीस काम के लीअे सद्भावना नीर्माण हो।

जमीन और संपत्ती की मालकीयत मीटनी चाहीअे, अपने पास जो भी संपत्ती और जमीन हो, अुसका अेक हीस्सा लोगों के लीअे देना ही चाहीअे। दूसरे को हीस्सा दीये बीना अुसे भोगने का हमको अधीकार नहीं हैं, चाहे हम खुद दरीद्र भले ही हों। यह सद्कामना हैं, जो हमारे अीस काम की बुनीयाद में हैं। अगर यह सद्वासना सबके हृदय में अुत्पन्न होती हैं, तो हम समझते हैं की हमारा काम अुसी क्षण पूरा हो जाता हैं। बाहरी हीसाब के लीअे हम जमीनतो अीकट्ठा करते हैं, हीसाब भी सुनाया जाता हैं, हम सुनते भी हैं और वह जरूरी भी समझते हैं; परंतु हमारे मन में दूसरा ही हीसाब चलता हैं। अभी जीस सद्भावना का जीक्र कीया, वह कीतने हृदय में पैदा हुअी, अुसका हीसाब हम मन में रखते हैं। जीन्होंने प्रत्यक्ष दान दीया, अुनके हृदय में कुछ अंशों में सद्भावना पैदा हुअी, अैसा मानना पड़ता हैं। परंतु जीन्होंने नहीं दीया; अुनके हृदय में भी सद्वासना पैदा हुअी होगी, अैसा संभव हैं। अीसलीअे कीतने हृदय में सद्भावना का प्रतीबींब अुठा, यही हमारी मुख्य तलाश होती हैं।

—वीनोबा

www.vinoba.in

सर्वोदय की दृष्टि से :

इनसान की शान हुकूमत नहीं, आज़ादी

राजसत्ता या बादशाहत में जो गुण राजा के लिए ज़रूरी समझे जाते हैं, वे ही गुण लोकसत्ता में नेता के लिए ज़रूरी समझे जाते हैं। राजा हुकूमत करना चाहता है और अपनी हुकूमत निबाहने के लिए लोगों को राज़ी रखने की कोशिश करता है। नेता यह कोशिश करता है कि लोगों को समझावे। और, साथ-साथ उनकी रहनुमाई के लिए हुकूमत से वह काम भी लेता है। जो आदमियों को परख सकता है, हर शख्स की खूबियाँ और खासियतें भाँप लेता है और उन्हें उनके मुआफ़िक काम में लगा सकता है, वह अच्छा नेता माना जाता है। समाज के हर व्यक्ति में कुछ-न-कुछ खास गुण होता है। अलग-अलग ये व्यक्ति और गुण बिलकुल बे-तासीर होते हैं। समाज की कोई भलाई करने की ताकत उनमें नहीं होती। उनको एक सूत्र में पिरोने की सिफ़त नेता में होती है। यह योजकता कहलाती है। जिसमें ऐसी योजकता हो, उसकी रहनुमाई में चलना सब क़बूल करते हैं; उसका सिक्का समाज में चलता है। इसमें करामत उन व्यक्तियों की नहीं होती; वरन् उनसे उनकी लियाक़त के मुताबिक काम लेने वाले 'योजक' की, नियंता की होती है।

जड़ उपकरण

इस तरह आदमी औज़ार बन जाता है और 'नेता या 'नियंता' उस औज़ार से काम लेनेवाला कर्मयोगी बनता है। अच्छा इंजीनियर वह है, जो हर-एक पेंच-पुर्ज़ा उसकी ठीक जगह बैठाता है। अच्छा कारीगर वह है, जो अपने औज़ारों से काम लेना जानता है और प्राप्त उपकरणों से कलाकृति का निर्माण करता है। लेकिन आखिर औज़ार औज़ार है और कारीगर-कारीगर है। औज़ार में न तो कोई स्वयं प्रेरणा है, न कार्यस्फूर्ति है और न स्वतंत्र अभिक्रम है। इनसान जब औज़ार बन जाता है, तो अपनी शान से गिर जाता है। असल में फिर वह अपने नेक या बदफैलों के लिअे ज़िम्मेवार भी नहीं रहता। समाज में कोई चीज़ बनती है, तो नेता को श्रेय है। कोई चीज़ बिगड़ती है, तो नेता का दोष है। बेचारा जनसमुदाय तो जड़ उपकरणों की तरह प्रवृत्तिहीन और प्रतिभा-हीन है।

नेतृतंत्र नहीं, लोकतंत्र

हमारा अभीष्ट यह नहीं है। हम तो 'सर्वोदय' चाहते हैं। सर्वोदय 'नेतृतंत्र' नहीं होता; 'लोकतंत्र' होता है। 'लोकतंत्र' में हर एक व्यक्ति 'आत्मतंत्र' होता है। वह अपना स्वार्थ और अहंता, दोनों की कुरबानी करता है। अपने से अनुभव और पुरुषार्थ में श्रेष्ठ व्यक्ति को जब वह अपनी शक्ति सौंप देता है, तो उस आत्मसमर्पण में उसकी अपनी बुद्धि जाग्रत रहती है और अहंता के समर्पण के कारण उसकी आत्मशक्ति बढ़ती है। व्यक्तियों का अपनी मर्ज़ी से किया हुआ आत्मसमर्पण उनकी अपनी शक्ति को बढ़ाता है और नेता की क्षमता को बढ़ाता है। लेकिन जहाँ नेता अपने इष्ट कार्य की सिद्धि के लिए अनुरूप गुणकर्म के व्यक्तियों को परख-परख कर चुनता है और उन्हें काम में लगाता है, वहाँ उसके सारे मददगार और साथी उसके औज़ार बन जाते हैं। दूसरे इनसानों को औज़ार बना कर उनसे काम लेने की सिफ़त एक बहुत बड़ा गुण अवश्य है, परन्तु वह इनसान की शान नहीं बढ़ाता। उसका बीजमंत्र होता है। 'कार्यक्षमता' और 'शीघ्रकारिता'। इस नेतृतंत्र-प्रक्रिया की गति सूक्ष्म होती है। हाल ही में मास्को में जो साम्यवाद पक्ष-परिषद हुई, उसने इसे 'व्यक्तिपूजा'—'द कल्ट आव् पर्सनैलिटी'—का नाम दिया है।

न कोई नेता, न कोई अनुयायी

एक नम्र और विनयशील व्यक्ति के लिए दूसरे मनुष्यों की जाँच-परख या परीक्षा करना भी कोई प्रिय व्यवसाय नहीं है। दूसरों की परीक्षा मत करो, अपना आत्मपरीक्षण करो, उसके लिए सदाचार का सूत्र है। दूसरों का परीक्षण करना उसकी साधना के लिए अनुकूल नहीं है। अहिंसक वृत्ति ने उसे अपने दोष और दूसरों के गुण देखना सिखाया है। उसके चित्त को यह अभ्यास हो गया है। दूसरों के गुणों से अधिक-से-अधिक लाभ उठाने की कुशलता का वह विकास करता है। समाज की उन्नति के लिए दूसरों के गुणों का पूरा-पूरा उपयोग हो; ऐसी परिस्थिति का निर्माण वह करता है। यही 'सहयोगात्मक कर्मयोग' की कला है। लेकिन इसमें सहकर्मयोगी व्यक्ति विधाता या अधिष्ठाता नहीं बनता।

'यंत्रारूढ़ानिमायया' की तरह वह दूसरों का संचालन और नियंत्रण कठपुतलियों की तरह नहीं करता। लोकतंत्रात्मक सहयोग में कोई नेता और कोई अनुयायी नहीं होता। सभी बराबर होते हैं। उनमें से एक ज्येष्ठ या प्रथम होता है। 'Primus inter Pare—'first among equals', बराबरीवालों में अव्वल का नियम वहाँ चरितार्थ होता है। इस संगठन का प्रेरकतत्त्व होता है, समान ध्येय और समान साधन तथा उसका नियामक तत्त्व होता है, एक-दूसरे के सहयोग की आवश्यकता एवं आकांक्षा। जहाँ ऐसी परिस्थित हो, वहाँ बाह्यनियमन और संविधान की ज़रूरत कम-से-कम मात्रा में होती है। जहाँ सामूहिक जीवन औपचारिक या कृत्रिम हो, वहाँ कृत्रिम अधिष्ठानों की और नियामकतत्त्वों की ज़रूरत रह जाती है। इसलिए सामुदायिक जीवन में तांत्रिक अचूकता, नियमितता और दक्षता का जितना महत्त्व है, उससे कहीं अधिक महत्त्व व्यक्तियों की स्वयं प्रेरणा, क्रियाशक्ति और सामुदायिक-वृत्ति के विकास की है। परन्तु जब सारा जीवन ही यांत्रिक और तंत्रवादी बन जाता है, तो अचूकता और दक्षता की वेदी पर मानवता की बलि चढ़ाना आवश्यक हो जाता है। मनुष्य सुख के लिए स्वतंत्रता को कुरबान करने पर आमादा हो जाता है। उसकी ज़रा-सी गलती के परिणाम इतने भयंकर और व्यापक होते हैं कि वह गलती करने की आज़ादी और हिम्मत, दोनों खो देता है। समाज-व्यवस्था जितनी पेचीदा, जटिल और उलझी हुई होगी, उतनी ही उसमें यांत्रिकता और तांत्रिकता अधिक आयेगी और साधारण मनुष्य की क्रियाशक्ति तथा सूझ-बूझ कम होती जायगी, क्योंकि खतरा उठाने के लिए मौका ही नहीं रह जायगा।

लोकसत्ता के लोप के सामान

शासन-मुक्त जीवन, तंत्रमुक्त सहयोगात्मक पुरुषार्थ, और दण्डनिरपेक्ष अनुशासन की बात जब कही जाती है, तो अक्सर उसकी यह टीका होती है कि यह तो 'मधुयामिनी स्वप्नदर्शन' है, इसमें कोई ठोस व्यवहार की बात नहीं है। इस आक्षेप का कारण यह है कि हम मनुष्य को आनंद का विधाता नहीं बनाना चाहते, वरन् उसे हम उपकरणों का दास तथा विषयलंपट बनाना चाहते हैं। असल में यह सबसे अधिक अव्यवहार्य और अनर्थकारक प्रवृत्ति है। मनुष्य की आत्मतंत्रता को यह समाप्त कर देगी और जब मानव आत्मतंत्र या स्वतंत्र नहीं रहेगा, तो उसमें सामाजिक विशेषताओं का विकास भी हरगिज़ नहीं हो सकेगा। यथार्थ में यह कोई समाज-विमुख अध्यात्मवाद नहीं है। सच तो यह है कि इसके बिना समाज में लोकसत्ता ही चरितार्थ नहीं हो सकती। यंत्रवाद और तंत्रवाद के पुरोहितों और उपाध्यायों के रूप में यंत्रविशारद विशेषज्ञों और इंजीनियरों का तथा तंत्रविशारद संयोजकों और मैनेजरों का अधिराज्य कायम होता है। फलतः लोकसत्ता का लोप हो जाता है।

आर्थिक जीवन में जिस मात्रा में यंत्रीकरण होगा, उसी मात्रा में राजनीतिक जीवन में तंत्रीकरण होगा। इंजीनियरशाही, मैनेजरशाही, और नेताशाही के त्रिविध तापों से लोकजीवन संतप्त हो जायगा, इसमें तनिक भी संदेह नहीं। लोकशाही का सूत्र है, 'मैं किसी की हुकूमत ज़बरदस्ती नहीं मानूंगा।' परन्तु यह उस सूत्र का पूर्वार्ध है। अधूरा सूत्र नीमहकीम से भी खतरनाक होता है। इस सूत्र का उत्तरार्ध है, 'मैं किसी पर हुकूमत नहीं करूँगा।' यह वास्तविक लोकसत्ता है। इसीमें मानव का गौरव है, नागरिक जीवन की सफलता है और इनसान की शान है।

नागपुर —दादा धर्माधिकारी
५-४-'५६

भारत हमारा देश है

बंगाल-बिहार का एक मिला-जुला राज्य बनाने की घोषणा जब इन दो प्रांतों के मुख्य मंत्रियों ने की, तो इन प्रांतों के सिवा और सारे देश ने तथा देश के लोकधुरीण नेताओं ने उसका स्वागत और अभिनंदन किया। इन दो प्रांतों की कांग्रेस-कमिटियों ने भी अनुशासन-पालन की शुद्ध व्यावहारिक और राजनैतिक भूमिका पर से उस घोषणा को स्वीकार किया। परंतु यह बात तब भी लोग जानते थे कि बिहार-बंगाल के पढ़े-लिखे तथा मध्यमवर्गीय लोगों ने उसको स्वीकार नहीं किया था। भाषा के दूध के साथ सत्ता की शराब जिस दिन मिला दी गयी, उसी दिन शुद्ध भाषिक विकास और विशिष्ट सांस्कृतिक उन्नति का तत्त्व हमारे लोक-जीवन में गौण बन गया। बिहार और बंगाल के बीच कुछ जिलों और तहसीलों के बँटवारे के बारे में झगड़ा था। दोनों प्रांतों की एक-दूसरे के सामने आत्मसमर्पण करने की वृत्ति नहीं थी। इस झंझट से बचने के लिए दोनों प्रांतों को एक कर देना एक अच्छी युक्ति समझी गयी। पर जहाँ एक-दूसरे के लिए भय और संदेह है, वहाँ इस तरह की कोई युक्ति सफल नहीं हो सकती। इसलिए अब एक साधारण उपचुनाव का सहारा लेकर विधानबाबू (बंगाल के मुख्य मंत्री) को अपना वीरतापूर्ण कदम वापस लेना पड़ा।

राज्य-पुनस्संगठन के इस सारे मामले में शुरू से आखिर तक बहुत बड़ा दोष यह रहा है कि सत्ताधारी पार्टी को ही देश मान लिया गया। सत्ताधारी पार्टी के सिवा जो दूसरी पार्टियाँ देश में मौजूद हैं और इन सबसे अधिक संख्या में जो निष्पक्ष लोग सर्वत्र फैले हुए हैं, उनका इस प्रश्न के साथ कोई सरोकार नहीं माना गया। नतीजा यह है कि राज्य-पुनस्संगठन जैसा एक सर्वपक्षीय प्रश्न भी आज पक्षगत मान-अपमान और प्रतिष्ठा का विषय बन गया है; और अब तो नौबत यहाँ तक पहुँच गयी है कि आये दिन सरकार में और राज्य-पुनस्संगठन आयोग के सदस्यों में भी खासी झड़प हो जाती है। सबसे आश्चर्यकारक मामला बंबई का है। आज उस प्रश्न पर गुण-दोष की दृष्टि से विचार करना ही असंभव हो गया है। क्या कोई शहर सार्वभौम स्वरूप का होने के कारण ही किसी भाषिक क्षेत्र में नहीं रह सकता? क्या दूसरे शहरों के विषय में भी हम यह नहीं चाहते कि वे बंबई की तरह सार्वभौम शहर बनें? इन बुनियादी प्रश्नों का विचार आज हो ही नहीं रहा है। अब तो बंबई का प्रश्न सार्वभौमता की भूमिका पर से उतर कर गुजराती-मराठी विवाद के क्षुद्र स्तर पर आ गया है।

दूसरी तरफ सरकार के सामने भी अब यह सवाल मुख्य नहीं है कि बंबई के बारे में क्या करना राष्ट्रीय जीवन के विकास की दृष्टि से आवश्यक होगा। अब सवाल यह है कि आज की परिस्थिति में अगर सरकार अपना निर्णय बदलेगी, तो सारे देश की जनता के मन पर यह असर होगा कि सरकार दबाने से दबती है, डराने से डरती है और धमकाने से मानती है। राज्य-पुनस्संगठन का प्रश्न अब इस सतह पर आ गया है। 'लोग समझेंगे कि हम डर गये हैं,' इसी डर से अब हिम्मत नहीं हो रही है।

उधर प्रांतवाद और भाषावाद का नशा इतना चढ़ गया है कि अगर कोई क्षेत्र केन्द्रीय शासन में रखा जाता है, तो भी लोग समझते हैं कि हमारी वस्तु का अपहरण हो गया। हमारे प्रदेश का कोई टुकड़ा दूसरे प्रांत में चला जाय, तब तो वह रौरव नरक में चला जाता है! लेकिन केन्द्रीय सरकार की अधीनता में रहे, तब भी वह परलोक में ही रहता है। इस भूमिका से सारे प्रांतों के भाषाभिमानी और "अस्मितावादी" क्षेत्रवादी लोग आज अपने-अपने क्षेत्रों के लिए अंधाधुंध आंदोलन कर रहे हैं। राज्यकर्ताओं ने अपनी पार्टी को ही सारा देश मान कर एक टुकड़े को समूचे की जगह मान लिया। वही गलती दूसरी ओर लोकपक्ष के नाम पर हो रही है। यों तो हर प्रांत के लोग कहते हैं कि देहली का सिंहासन हमारा है। लेकिन देहली के शासन में अगर उनके प्रांत का कोई हिस्सा रहता है, तो कहते हैं कि हमारी चीज छीन ली गयी।

हम सब भाषिक आवेश में आकर इस समय यह भूल रहे हैं कि राज्य-पुनस्संगठन का प्रश्न न्याय-अन्याय का या नीति-अनीति का प्रश्न नहीं है; बल्कि सुविधा और सुव्यवस्था का प्रश्न है। सुविधा और सुव्यवस्था में भाषिक एकता का स्थान बहुत बड़ा है। लेकिन आखिर हम अपनी-अपनी भाषाओं में भी प्रतिपादन और प्रचार तो अखिल भारतीयता और विश्वमानवता का ही करना चाहते हैं न? हिंदी, मराठी, गुजराती, बंगाली, आंध्र, कन्नड़, तेलगू, मलयाली और सिक्ख-हिंदू—सभी अपनी-अपनी भाषाओं में नारा तो यही बुलंद करना चाहते हैं न, कि 'भारत हमारा देश है?' तो फिर प्रांतीय और भाषिक प्रतिष्ठा की भ्रमात्मक भावनाओं के वशीभूत होकर क्या हम सब अखंड भारत से शतखंड भारत की ओर कदम बढ़ाना ही अपना कर्तव्य समझते हैं?

आज आवश्यकता इस बात की है कि राज्यकर्ता जनता को अपना प्रतिपक्षी न समझें और जनता के सामने झुकने को अपनी हतक न समझें; और दूसरी तरफ प्रांतीय अस्मिता के पुरुषार्थवान् अभिभावक केन्द्रीय सरकार को परायी सत्ता और देहली को परलोक न मानें।

गया, ६ मई '५६ —दादा धर्माधिकारी

... प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि पहले वह अपने आपको वैसा ही बना ले, जैसा कि वह दूसरों को बनाने का उपदेश देता है। अपने आपको भली भाँति अनुशासित रख कर वह दूसरों को भी अनुशासित कर सकता है। आत्मा का वश में करना ही तो सबसे कठिन काम होता है। ... —भगवान् बुद्ध

www.vinoba.in

आन्दोलन की चार अवस्थाएँ

(विमला बहन द्वारा शंका-समाधान)

[श्री विमला बहन के महाराष्ट्र के दौरे में उनसे जो सवाल पूछे गये, उनके उत्तर सभी प्रान्तों के कार्यकर्ताओं के लिए उद्बोधक साबित होंगे, इसलिए मराठी "भूदान-यज्ञ" से हम यहाँ उन्हें सादर उद्धृत करते हैं।—सं०]

इस आंदोलन के विषय में लोगों की अनास्था और शिथिलता तथा कार्यकर्त्ताओं की दुर्बलता आदि की कठिनाइयों को लेकर प्रश्न पूछे गये। जवाब में विमला बहन ने कहा :

"हर एक आंदोलन की चार अवस्थाएँ देखी जाती हैं। यथा—उपेक्षा, शंकाशीलता, विरोध—इन तीन अवस्थाओं में से जो आंदोलन और जो कार्यकर्ता अपना स्वत्व संभाल कर उत्तीर्ण होते हैं, वे फिर चौथी अवस्था तक पहुँचते हैं। यह चौथी अवस्था है—लोगों की सहानुभूति तथा अनुकूलता। आज भूदान-यज्ञ की तीन अवस्थाओं में से हम पार हो रहे हैं। यह हमारे लिए सौभाग्य का विषय है कि समय इस आंदोलन के लिए अनुकूल है। इसीलिए इन तीन अवस्थाओं में से गुजरने में हमें ज्यादा वक्त नहीं देना पड़ा।"

इन अवस्थाओं का विवरण करते हुए विमला बहन ने कार्यकर्ताओं को अपने अनुभव की अनेक बातें बतलायीं।

कार्यकर्ताओं की सभाओं में तथा सार्वजनिक सभाओं में ग्रादादान के सिलसिले में विनोबा की एक महत्त्वपूर्ण सूचना विमला बहन विशेष रूप से बतलाती थीं।

चुनाव के वक्त हम क्या करें ?

जहाँ ग्रामदान हुआ था, ऐसे गाँवों के कुछ व्यक्ति विनोबाजी से मिलने आये थे और उन्होंने उनसे पूछा था :

"आप कहते हैं कि गाँव के सारे काम एकमत से होने चाहिए। अब चुनाव नजदीक आ रहे हैं और अलग-अलग पार्टियाँ प्रचार के लिए हमारे गाँवों में आयेंगी। गाँववाले असमंजस में पड़ जायँगे। इस मामले में हम क्या करें ?" आपका क्या सुझाव है ?"

विनोबा ने उन लोगों से कहा : "आप सब गाँववाले इकट्ठे बैठ कर तय कीजिए और हर एक पार्टी को पत्र लिखिए कि हमारे गाँव में चुनाव के प्रचार के लिए आना हो, तो आप सारी पार्टियोंवाले मिल कर हमें कोई भी एक तारीख दीजिए। ज्यादा दिन और समय इस काम के लिए देने को हमारे पास अवकाश नहीं। इसलिए आप लोग नियत तारीख को सब मिल कर यहाँ पधारें। इससे एक ही सभा में एक-दूसरे के आमने-सामने सारी पार्टियों को तरफ से भाषण होंगे। एक-दूसरे की टीका और गाली-गलौज पर बहुत नियंत्रण आ जायगा। उनकी बातें सुनने के बाद आप उनसे कहिये कि आप लोगों को जो कहना था, वह आपने कहा। अब हम उसपर विचार करेंगे। फिर उन सबको भोजन कराइये और तुरंत गाँव से रवाना कर दीजिए। अगर वे गाँव में रह गये तो फिर 'चाबीवाले वोटर' याने जो दस-बीस वोट दिला सकें, ऐसे वोटरों की वे खोज करेंगे। उन्हें अपनी तरफ मिलाने की कोशिश करेंगे और गाँव में गड़बड़ी पैदा करेंगे; इसलिए पार्टीवालों को गाँव में ठहरने नहीं देना चाहिए।"

विमला बहन की स्पष्ट विचारसरणी, प्रगाढ़ श्रद्धा, हृदय की लगन, विवेचन की कुशलता और अमोघ वक्तृत्व आदि गुण-समुच्चय ने सभी श्रोताओं के हृदय को पकड़ लिया। इन गुणों के साथ-साथ कार्यकर्ताओं के विषय में उनके मन में असीम स्नेह-भाव है। जगह-जगह के कार्यकर्ता उनके निकट आते थे। विमला बहन में लोकसंग्रह की अजीब सिफत है।

ग्रामदान की प्राण-प्रतिष्ठा

(जेठालाल गोविंदजी)

दुनिया में सामान्यतया आजकल प्रायः स्वार्थमयता है। ऐसे समय में ग्रामदान द्वारा गाँव के संयुक्त हित में पूरे कुटुंब के सर्वांग-हित को मिला लेना सचमुच अद्भुत उच्चता की बात है। चारों ओर कलियुग के बीच, मूर्तिमंत सतयुग की इसमें स्थापना होती है। मानो समष्टि के रूप में यह ईश्वर का अवतार ही हुआ।

सैकड़ों की संख्या में ग्रामदान मिलना केवल एक घटना मात्र नहीं हो सकती। इतने ग्रामदान सफल तभी हो सकते हैं, जब समत्व की व विकसित बंधुत्व की जड़ लोक-जीवन के सब अंगों में पहुँच जाय। परन्तु यह मानना ठीक न होगा कि लोक-चरित्र में व लोक-जीवन के सब अंगों में, इस भावना ने अपना यथेष्ट स्थान जमा लिया है। अगर ग्रामदान होने पर भी, इस भावना की रंगत व सुगंध लोकजीवन के सब अंगों में न रही, तो हमारा यह कार्य स्थायी न होगा।

अतः हमें यह विचारना है कि हमारी सामान्य जनता मानव-जीवन की यह मूलभूत भावना अपने जीवन में किस प्रकार उतारे। ग्रामदान के पीछे जो वृत्ति है, वह जीवन में अंकित कैसे हो जाय ?

यह तो साफ है कि इस दिशा में जो प्रयत्न हों, वे लोक-हृदय को स्पर्श करने वाले होने चाहिए। आज तक खादी-कार्य, ग्रामोद्योग, शिक्षण आदि जो रचनात्मक कार्य हुए हैं, वे प्रायः स्थूल बाह्य साधन व ऊपरी क्रियाओं के रूप में भौतिक दृष्टि-विशेष से हुए हैं। हृदय को छूने की योजना उनमें नहीं रही रही है। इसलिए उनके कुछ स्थूल परिणाम भले आये हों, लेकिन लोक-हृदय पर उनका असर कम हुआ है। बृहत् व्यवस्था, विस्तार, दौड़-धूप आदि का वृथा भार मन पर होने के कारण कार्यकर्ता निराश होते जा रहे हैं।

उन्नत हृदय की आवश्यकता

हमें यह याद रखना होगा कि खेती-सुधार, खादी-कार्य, प्रौढ़ शिक्षण अथवा कुछ भी तब होगा, जब उसकी प्रेरणा लोगों के साथ परम आत्मीयता महसूस करने वाले चारित्र्यवान् व्यक्तियों से मिले। खेती या दूसरे क्षेत्र के केवल विशषज्ञ, आम जनता के लिए कुछ काम के नहीं हैं। उच्च सेवकों के लिए भले ही ये कुछ उपयोगी हों, परन्तु कैसा भी और कितना भी विशेषज्ञ अगर उन्नत हृदयवाला न होगा, तो उसकी प्रेरणा लोक-हृदय में प्रवेश नहीं कर सकेगी।

इस विषय में एक बात भूल ही जाती है। मनुष्य के सुधार का कोई भी कोर्स या शिक्षण की अवधि लंबी होने की जरूरत नहीं है। रसोई अगर स्कूल या कालेज में सिखायी जाती है, तो बहुमूल्य मानव-जीवन के कितने वर्ष फजूल जाते हैं। फिर भी व्यावहारिक व स्वाभाविक शिक्षण नहीं मिलता। शिक्षण-मात्र रसोई बनाने जैसा स्वाभाविक होना चाहिए। यह कैसे हो, यह मैं लगातार तीस साल से यथाशक्ति तन्मयता से रचनात्मक कार्य के असफल प्रयत्नों के बाद सीखा हूँ। मेरी समझ में लोगों को निम्नलिखित बातों का महत्त्व भली-भाँति समझाया जाना चाहिए :

पंचसूत्री

(१) रोज पूरे कुटुंब के साथ बैठ कर, कम-से-कम एक बार थोड़ा भी ईश्वर-स्मरण करना; (२) दिन में सदा कुछ-न-कुछ काम करते रहना; (३) जिस काम के लिए खुद को ऐसा लगे कि यह कार्य तो करना ही चाहिये, वह कार्य किये बिना न रहना। (४) जो कार्य करना ठीक नहीं है, ऐसा खुद को जँचे, वह कार्य न करना, चाहे कुछ हो जाय; (५) रोज कुछ-न-कुछ दुसरों का भला करना; ऐसा संयोग न मिले, तो कम-से-कम एक बार बोलना कि भगवान् सबका भला करे।

इन पाँच बातों में मेरे मत से मानव-जीवन की उच्चता की सब आव-श्यक बातें आ जाती हैं। ग्रामदानवाले क्षेत्र में उपर्युक्त पाँच बातों का महत्त्व समझाना और फिर आबाल-वृद्धों को मिलाजुला कर उनसे इन पाँच बातों का पालन कराना, नित्य नयी प्रेरणा व मार्ग-दर्शन देना और दिक्कतें सुलझाना; यही हमारा सबसे बड़ा, खास और जरूरी काम है। ऐसे सेवक के पास लोग अपना हृदय खोलेंगे और तभी इच्छित कार्य होने लगेगा। एक-एक सेवक छोटे-बड़े १०—१५ गाँव संभाल सकते हैं।

यह जिम्मेवारी उठाने वाले सेवक को इस कार्य के अलावा अपनी कोई खास जिम्मेवारी या काम नहीं रहेगा। उसका एक-एक श्वास, एक-एक क्षण, एक-एक विचार और एक-एक काम सार्थक होगा। परंतु वह खुद कोई ऐसी जिम्मेवारी नहीं रखेगा कि जिसमें वह स्वयं उलझ जाया करे। वह प्रवृत्तिमय होगा, परंतु लोगों की प्रवृत्ति ही उसकी प्रवृत्ति होंगी। वह जहाँ जायगा, वहाँ हर किसी के साथ काम में योग देगा। वह जहाँ तक हो, अपने आधार पर कोई भी कार्य नहीं रखेगा। वह दोनों समय आम प्रार्थना करेगा, अपने कामों की डायरी रखेगा और देश तथा दुनिया की महत्त्वपूर्ण बातों से परिचित रहेगा।

मार्गदर्शन देने में विवाह, बीमारी, मौत, बाढ़, आयात-निर्यात-सामग्री, लड़ाई-झगड़ा व अदालत आदि बातें आयेंगी। अब इनमें से कुछ बातें अटपटी लगेंगी। लंबे लड़ाई-झगड़े में वह नहीं पड़ेगा। मुँह धोना, स्नान करना, कपड़े धोना, थूकना, साधारण बोलचाल, पशुओं के साथ व्यवहार आदि प्रत्येक वस्तु का उचित उपयोग आदि प्रत्येक क्षुद्र मालूम होने वाले काम में मार्ग-दर्शन करना ठीक होगा। मनोरंजक कार्यक्रम कोई खास अलग खड़ा करने की जरूरत नहीं रहेगी। जीवन के प्रत्येक कार्य से जीवन रस या आनंद-लाभ करने में ही सेवक की शान है।

www.vinoba.in

सेवक-संस्था : कुटुंब

क्षेत्र के बाहर खास कार्यकर्ता या सेवक की अगर जरूरत हो, तो केवल ऊपर लिखे काम के वास्ते भले ही वे आयें, आम तौर पर अपने-अपने कर्तव्य निभाते हुए परस्पर-सेवा करने वाले सेवक-कुटुंबों द्वारा ही काम कराना चाहिए।

सुधार जहाँ तक हो, स्थानिक बल पर ही हो। बाहर का आधार न हो। सरकार की खास सहायता भी न लेनी पड़े, सेवक यह अपनी मर्यादा रखेगा। सरकार अपनी तरफ से भले कुछ करे, हमारा सेवक उसमें नहीं उलझेगा। दरख्वास्त लिख देना या इसी तरह के दूसरे कार्य वह अपने जिम्मे न लेगा।

हमें यह संभाले रहना पड़ेगा कि सेवा की अपनी उत्कटता के कारण हम बिगाड़ न दें। इस संबंध में उसे दो-एक बातें खास देखनी होंगी। बहुधा दवा, शिक्षण आदि विषयों में सेवकों से भूल हो जाया करती है और सेवा के बदले कुछ कुसेवा हो जाती है। दवा के क्षेत्र में हमारी तरफ से किसी भी पेशे के लिए दवाखाना खोलना जरूरी नहीं है। दवा के क्षेत्र में खान-पान में प्राकृतिक रहन-सहन व प्राकृतिक चिकित्सा का सूचन काफी है। सेवक सहज में ही उस क्षेत्र के लोगों में से ही किसी व्यक्ति को अपनी मर्जी से सेवा देने के लिए तैयार करा लेगा।

शिक्षण के नाम से अक्षर-ज्ञान देने के फेर में पड़ने की खास जरूरत नहीं है। इसका कोई खास मूल्य भी नहीं है। जो हम करने जा रहे हैं, वही सच्चा शिक्षण है। वह भी कोई लंबा-चौड़ा कार्यक्रम नहीं है। समाज के थोड़े व्यक्तियों में आते ही वह समाज भर में फैल जायगा। वातावरण पैदा करने से हमारा कार्य लोग खुद आचरण करके दूसरों में भी फैलाते रहेंगे।

धंधे के विषय में भी हम उन्हें ऐसे धंधे नहीं बताते हैं कि जिनके लिए बाहरवालों का आधार जरूरी रहे। जीवन-लक्ष्य का साधारण चित्र हमारे सामने सदा रहे। अन्न, शाकभाजी वगैरह पैदा करना और उसे खाने लायक बनाने के लिए पीसना, कूटना वगैरह बुनने तक का वस्त्र-स्वावलंबन, गोपालन—यह यह घर-घर हो।

दूसरी चीजों में यथाशक्य ग्राम-स्वावलंबन हो। सीमेंट, सायकिल, ट्रैक्टर, तेल-मशीन, माल ढोने की लारियाँ वगैरह न हों, तो भी हर्ज नहीं। खेती में यथाशक्य सिंचाई-व्यवस्था का आग्रह हो। सब कार्य मैत्री-भाव से हो, हमदर्दी से हो; कुछ देना या सिखाना है, इस भाव से नहीं। इन प्रयासों के लोक-जीवन में दाखिल होने पर चैतन्य दिनों-दिन फैलता जायगा। अगर एक स्थान पर भी यह काम हुआ, तो दुनिया भर में वह फैल जायगा।

श्रमभारती, खादीग्राम की साम्ययोग-डायरी

उत्सव, अनुष्ठान और सर्वोदय

(दूसरे केन्द्रों की तरह हमारे यहाँ भी शुक्रवार को विशेष प्रार्थना और सामूहिक कताई होती है। प्रार्थना के बाद पू० धीरेन् भाई का प्रवचन होता है। प्रवचन में वे हमारे काम और जीवन के किसी-न-किसी पहलू पर सर्वोदय की दृष्टि से प्रकाश डालते हैं। श्रमभारती में आज जो भी थोड़ा-बहुत काम हो रहा है, उसमें मूल दृष्टि है, जीवन-परिवर्तन की। जीवन-परिवर्तन में वर्ग-परिवर्तन और शोषण-मुक्ति का विचार है। शोषण-मुक्ति केवल इस अर्थ में नहीं कि दूसरा कोई हमारा शोषण न करे, बल्कि इस अर्थ में भी कि हम किसी दूसरे का शोषण न करें। पू० धीरेन् भाई के प्रवचन हमें विचार की गहराई तक ले जाते हैं; जीवन को विस्तृत 'पर्सपेक्टिव' में देखने की प्रेरणा देते हैं। शुक्रवार या अन्य किसी विशेष अवसर पर प्रवचन के अलावा वह नित-दिन उठते-बैठते, खाते-पीते कोई-न-कोई विचार गप के रूप में भी देते ही रहते हैं। हमारे पास बाहर के अनेक भाई-बहनों के पत्र विविध विषयों पर उनके विचार जानने के लिए आते हैं। हमारे लिए इतनी बड़ी संख्या में लंबे-लंबे पत्र लिखना सम्भव नहीं है, इसलिए हमने सोचा है कि जहाँ तक सम्भव हो, हर हफ्ते हम धीरेन् भाई के विचारों को 'भूदान-यज्ञ' के पढ़ने वाले भाई-बहनों के समक्ष रखें—किसी पांडित्यपूर्ण लेख के रूप में नहीं, बल्कि 'साम्ययोग की डायरी' के रूप में। इस अंक से हम यह क्रम शुरू कर रहे हैं।—ले०)

एक रोज अपने प्रवचन में पूज्य धीरेन् भाई ने गत २४ अप्रैल को यहाँ हुए विवाह की विस्तारपूर्वक चर्चा की। मंडप में जितना कर्मकांड हुआ, उसमें एक घंटे से कुछ ही अधिक समय लगा था। लेन-देन या भेंट-उपहार का तो प्रश्न ही नहीं था। शास्त्रीजी ने, जो भू-दान के कार्यकर्ता हैं, विवाह के समय पैसे का नाम भी नहीं आने दिया था। विवाह के समय श्रमभारती-परिवार के लोग थे और पड़ोसी गाँवों के कुछ भाई-बहन आ गये थे। सारा काम सादगी और शिष्टता के साथ सम्पन्न हुआ था। फिर भी एक चीज ऐसी निकल आयी, जो धीरेन् भाई के उद्‌गार का निमित्त बन गयी। हुआ क्या कि सिंदूर-दान के समय सिंदूर सोने से छुलाकर पहनाया गया। बहनों ने आग्रह किया कि सुवर्ण का न रहना अशुभ माना जाता है। फलतः सुवर्ण छुलाया गया। सिंदूर-दान हुआ। धीरेन् भाई ने यह सब देखा, लेकिन चुप रहे।

हम लोग, जो विवाहोत्सव देख रहे थे, यह नहीं समझ सके कि एक मामूली उपचार में इतना बड़ा संकेत है। उनके कहने पर आँखें खुलीं।

युग-आकांक्षाओं की प्रतिध्वनियाँ

धीरेन् भाई ने कहा : "पुराने रस्म-रिवाज के अनुसार विशेष अवसरों पर हम विशेष कपड़े पहनते हैं, विशेष खाना खाते हैं। 'विशेष' में दृष्टि यह होती है कि हम किस चीज में विशेषत्व मानते हैं। एक जमाना था, जब यजमान या शिष्य को 'राजा हो' का आशीर्वाद मिला करता था। 'राजा हो'—यह सामन्तवादी और राजतन्त्र के जमाने की प्रचलित आकांक्षा थी। उस समय राजा होना विशेष सौभाग्य की बात समझी जाती थी। लेकिन लोकतंत्र के युग के गांधी की आकांक्षा दूसरी थी। बापू चाहते थे कि 'मैं अगले जन्म में भंगी ही बनूं।' हर युग के अपने मूल्य होते हैं और उन मूल्यों के अनुरूप आकांक्षाएँ होती हैं। हमारे रस्म-रिवाजों में हमारे जीवन-मूल्यों और आकांक्षाओं का प्रतिबिंब होता है। शादी में सोने से सिंदूर पहनाना, यह पूंजीवादी समाज की मान्यता है। हम तो पूंजी के स्थान पर श्रम को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं, फिर हम सोने को इतना महत्व कैसे दे सकते हैं? हमारा रास्ता कांचन-मुक्ति का है, कांचन-आसक्ति का नहीं।

"उत्सव आदि में यह प्रश्न भी पैदा होता है कि खाना क्या हो। मजदूर रोज सत्तू खाता है, लेकिन विशेष अवसरों पर वह दाल-भात खाता है। दाल-भात उस अभागे की अतृप्त आकांक्षा है। दाल-भात खाकर मजदूर सोचता है कि आज हमने बाबू का भोजन किया।"

हमारी आकांक्षा क्या हो ?

"खादीग्राम की क्या आकांक्षा हो? हम यहाँ मजदूर के जीवन से समरस होने आये हैं। हम श्रेणी-विहीन समाज और श्रम-निष्ठ जीवन का अभ्यास करने आये हैं। अगर सचमुच यही हमारी आकांक्षा है, तो विशेष अवसरों पर हमारा आचार उस आकांक्षा के अनुरूप होना चाहिए। हम अपने संस्कारवश या शारीरिक कारणों से रोज मजदूर का खाना नहीं खा सकते। भले ही न खायँ, लेकिन विशेष अवसरों पर हमें मजदूर का ही खाना खाना चाहिए। विशेष अवसर का यही हमारे लिए विशेषत्व है। पर्व की पूड़ी और शादी का सुवर्ण, ये हमारे विचार के अनुकूल नहीं हैं।

क्रांति

"गांधी की क्रांति जीवन बदलने की क्रांति है। अगर हमें वह क्रांति प्यारी है, तो हमारी आकांक्षाएँ बदलनी चाहिए। विवाह और सम्पत्ति, यदि इन दो के सम्बन्ध में हमारी धारणाएँ न बदलीं, तो जीवन-परिवर्तन की बात थोथी ही सिद्ध होगी।"

बाद को आपस में चर्चा से तय हुआ कि पर्व के दिन या किसी विशेष अवसर पर हम लोग ४ आना ३ पैसे का ही भोजन करें। पड़ोस के ललमटियाँ गाँव के लोगों की औसत मासिक आय आठ रुपये बारह आना मात्र है, यानी ४ आना ३ पैसा प्रति दिन। साल भर में, ज्यादा नहीं तो ४–६ दिन, हम ४ आना ३ पैसा में गुजर करें और देश के मजदूर के नजदीक पहुँचने की कुछ कोशिश तो करें।

—राममूर्ति

पंचायतों के लिए एक सुझाव

हमारी यह प्राचीन परंपरा है कि जब हम कुछ पावन काम शुरू करते हैं, तो उस खुशी में हम दान-पुण्य करते हैं। पहले समय में जनता का भार हाथ में लेने वाले शासक खुशी से लगान माफ करते थे, कैदी छोड़ते थे, बच्चों को पुरस्कार देते थे आदि, आदि। आज भी कहीं-कहीं यह परंपरा है। इसी तरह गाँव-समाज देश के उत्पादन-काम आज बढ़ायें। पंचायतें यह जिम्मेवारी लें कि गाँव में कोई बिना जमीन, बिना रोजगार न रहे। शहर के माल और शराब आदि नशे का बहिष्कार हो। गोस्वामी श्री तुलसीदासजी ने कहा है :

मुखिया मुख सो चाहिए खान-पान को एक।
पालिय पोषिय सकल अँग, तुलसी सहित विवेक॥

—बाबा राघवदास

---

www.vinoba.in

सामूहिक पदयात्राओं की पूर्वतैयारी

(ब्रजेशचंद्र वर्मा)

जिस तहसील में पदयात्राएँ निकालनी हों, उसके छोटे-छोटे विभाग बना लेने चाहिए। ये टकड़े एक सर्कल के या उसके आधे या दो-तिहाई के बन सकते हैं। इस प्रकार के टुकड़े बनाते समय इस बात का ध्यान रहे कि हरएक टोली की औसतन प्रतिदिन एक-दो गाँव आवें तथा दिन में पाँच-छह मील से ज्यादा चलना न पड़े। फिर तहसील के हरएक पक्ष के प्रमुख सदस्य तथा प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ताओं से मिल कर उनकी सभा लेनी चाहिये तथा समय लेना चाहिये। मान लीजिये कि पूर्व-तैयारी के लिए दस दिन हैं और तहसील में चार सौ गाँव हैं, तो दस टोलियों से या बीस कार्यकर्ताओं से दस-दस दिन मिलने चाहिए, तब पूर्व-तैयारी अच्छी हो सकेगी। पद-यात्रा के लिए तहसील में दो सौ से तीन सौ दिन चाहिये। मान लीजिये कि छह दिन की पदयात्रा है, तो करीब चालीस टोलियाँ लगेंगी। हर टोली में तीन से पाँच व्यक्ति चाहिये। पूर्व-तैयारी में हमें हरएक टोली के कम-से-कम आधे गाँवों में पहुँचना चाहिए। वहाँ पर हमें हर दो गाँव के पीछे एक दानपत्र एवं एक कार्यकर्ता प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिये। हर गाँव में भूदान-विचारधारा के अनुकूल व्यक्तियों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिये। उनसे दान प्राप्त करने और सप्ताह में आने वाली टोली को मदद करने का भी आश्वासन प्राप्त करना चाहिये। जो कार्यकर्ता पदयात्रा में समय देंगे, उन्हें कुछ भूदान-साहित्य भी अध्ययन करने के लिए बेचना चाहिए। शिविर के लिए हर गाँव से कम-से-कम एक व्यक्ति आ जावे, ऐसा प्रयत्न करना चाहिए।

पूर्वतैयारी में हर गाँव में यह खबर अच्छी तरह से हो जानी चाहिये कि भूदान-कार्यकर्ता आ रहे हैं। गाँवों में जगह-जगह भूदान के नारे एवं भूदान-सप्ताह (किस तारीख से किस तारीख तक) में जमीन, धन, साधन, श्रम और समय-दान लोग दें आदि लिखा जावे। गाँवों में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनके दान देने से दूसरे लोगों को दान देने की निर्णय लेने में मदद मिलती है। ऐसे व्यक्तियों का सहयोग लेने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। यथासंभव कुछ गरीबों का भी हर गाँव में सहयोग प्राप्त करना चाहिए। पूर्वतैयारी में मुख्य उद्देश्य कार्य-कर्ता प्राप्त करना और अनुकूल व्यक्ति खोजना है, जिससे सप्ताह में अच्छा काम हो। कार्यकर्ता हमें सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं में से तथा शिक्षकों में से मुख्यतः मिल सकते हैं। सरकारी अधिकारियों का सहज सहयोग प्राप्त करने की भी कोशिश करनी चाहिए।

इसके अलावा कार्यालय में कुछ पूर्वतैयारी करनी होती है। टोलियों की बिक्री के लिए साहित्य देना पड़ता है। उसके संच तैयार करने चाहिये। यदि हरएक टोली को समान कीमत और पुस्तकों के संच दें तो सहूलियत होती है। साथ ही कुछ छोटे संच भी बनाये जा सकते हैं, जो कुछ टोलियों को माँगने पर दिये जा सकते हैं। हरएक टोली को उनके क्षेत्र के गाँव उनसे जाने का क्रम एक नकशा तथा जाने और लौटने का मार्ग, ट्रेन-बस का समय आदि बताने चाहिए। यह जानकारी नकशे में दी जा सकती है। टोली का कार्यक्रम बनाते समय इस बात का ध्यान रहे कि जहाँ बाजार भरता हो, वहाँ टोली बाजार के दिन पहुँचे तथा जहाँ स्कूल हो, वहाँ छुट्टी के दिन न पहुँचे। हरएक टोली को एक कापी देनी चाहिये तथा अपने कार्य के विवरण का एक फार्म, भाषण का ढाँचा या मुद्दे तथा हिसाब पेश करने की हिदायतें देनी चाहिए।

शिविर में हरएक कार्यकर्ता को दो-तीन बार भाषण देने का मौका देना चाहिये, जिसमें वह पूरा भाषण दे सके तथा उसका संकोच दूर हो। समय के अभाव में यह संभव न हो सके, तो चार-छह की टोलियाँ बना कर एक साथ यह कार्यक्रम हो सकता है। इन टोलियों के सदस्यों को अदल-बदल कर नयी-नयी टोलियाँ बनायी जा सकती हैं, तथा हरएक व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूरा फायदा उठाया जा सकता है।

शिविर में क्या हो ?

पहले दिन उद्घाटन हो, जिसमें भूदान की भूमिका प्रकट हो। कार्य-कर्ताओं का परिचय तथा भूदान के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर अधिकारी व्यक्तियों द्वारा प्रकाश डाला जावे। रात्रि को कुछ गीत कार्यकर्ताओं से गवाये जावें। भाषण के प्रसंग के अनुकूल कुछ किस्से कहानियाँ बताये जावें, जिससे भाषण रोचक हो। दूसरे दिन भूदान के पहलू या भाषण तथा हमेशा उठने वाली शंकाओं के समाधानपूर्वक उत्तर बताये जायँ तथा टोलियाँ बना कर उनके भाषण सुने जावें। कुछ समय उन्हें भाषण दुहराने को भी दिये जायँ। उन्हें दानपत्र, वितरण, प्रवास-पत्र, रसीद-बुक आदि भरना बतलाया जावे तथा हिसाब किस प्रकार दिया जाता है, बताया जावे। शिविर का कार्यक्रम इस प्रकार रखा जाय कि सारी बातें सहज रूप से सध जावें।

टोलियाँ गाँव में जावें, तो वहाँ पर कुछ प्रमुख लोगों से मिल कर उनके सहयोग से दानपत्र प्राप्त करें। सभा की सूचनाएँ दिलवानी चाहिए। संभव हो, तो प्रभात या सायं-फेरी निकालनी चाहिए। सभा में दान का आग्रह करना चाहिए, परन्तु व्यक्तिगत नहीं। भूदान के साप्ताहिक पत्रों के प्रचार पर जोर देना चाहिए। इसके बाद पुस्तकों की बात करनी चाहिये। सभा के बाद घर-घर जाकर दान प्राप्ति, 'भूदान'-साप्ताहिक के ग्राहक बनाने और साहित्य-बिक्री की कोशिश करनी चाहिए।

समारोप के दिन सब टोलियों का हिसाब, शिबिर और सप्ताह का हिसाब तथा सबका मिलाजुला अहवाल बनाया जावे। कायकर्ताओं के अनुभव सुने जावें। टोली-नायक कतार में आकर अपना-अपना विवरण मुख्य अतिथि को दें। सप्ताह के आयोजक सारे दानपत्र आदि मुख्य अतिथि को भेट करें तथा हिसाब और कार्य-विवरण पेश करें तथा कार्यकर्ताओं का आवाहन करें। अतिथि महाशय भी आवाहन कर योग्य मार्ग-दर्शन दें। इस प्रकार सामूहिक पदयात्रायें की जावें, तो तो काफी अच्छे नतीजे निकलेंगे।

एक पत्र :

'मच्छरदानी'

"भूदान-यज्ञ" के ४ मई '५६ के अंक में "पदयात्रा में मक्खी-मच्छरों से बचाव" शीर्षक श्री राम म्हसकरजी का लेख पढ़ा। मच्छरदानी का अपने आप खड़े रहने वाला यह चौखट पहले १९४६ में उड़ीसा के बरी ग्रामसेवा-केंद्र में बनाया गया था और तभी से सर्वप्रथम नमूने का उपयोग मैं करता आ रहा हूँ। उड़ीसा के अन्य एकाध कार्यकर्ता के पास भी उसके नमूने थे।

पू० विनोबाजी की उत्कल-पदयात्रा के समय श्री महादेवीताई के आग्रह से पदयात्रियों के लिए वैसे चौखट बनाये गये और उसमें कुछ सुधार भी हुए। उसके मूल नमूने में हमने उसके लिए उसके नाप की स्वतंत्र मच्छरदानी रखी थी। बाद में उसमें थोड़ा-सा सुधार किया गया, ताकि मामूली मच्छरदानी का भी उपयोग उस पर हो सके।

उसके उद्भावन के इतिहास की इतनी जानकारी देने के लिए मैं यह पत्र लिख रहा हूँ।

कटक (उड़ीसा) —मनमोहन चौधरी

(इस मसहरी की सूझ किसकी है, यह बात बहुत महत्त्व की तो है। लेकिन पिछले दिनों श्री रामभाऊ म्हसकर ने जो लेख लिखा, उसका अभिप्राय यह नहीं था कि मसहरी किसने खोजी, इसकी तरफ़ ध्यान दिलाया जाय। सूझ किसीकी भी क्यों न हो, मसहरी प्रवास के लिए उपयोगी है, इतना ही बतलाने का उद्देश्य था। —सं०)

प्रकाशन-विभाग-संवाद :

'गीता-प्रवचन' का दसवाँ संस्करण

हिन्दी 'गीता-प्रवचन' का नया दसवाँ संस्करण, जिसमें पू० विनोबाजी ने डेढ़ महीना समय देकर कुछ सुधार किया है, प्रेस में तैयार हो रहा है। गीता-अध्याय-संगति भी जोड़ी जावेगी। इसलिए २८० पन्नों की जगह करीब ३२० पन्ने की किताब हो जावेगी। फिर भी व्यापक प्रचार की दृष्टि से कमीशन कुछ अधिक देने का सोचा गया है। जो मई ३० जून १९५६ तक अग्रिम रकम भेज देंगे, उन्हें उनके ऑर्डर पर ३५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा। १५० किताबों के एक बंडल से कम पर यह रिआयत नहीं दी जा सकेगी। ऑर्डर बंडलों के दिये जायँ। प्रति बंडल १०० रुपया अग्रिम आवे। ३० जून के बाद सामान्य कमीशन के अतिरिक्त यह रिआयत नहीं दी जा सकेगी। माल जुलाई में भेजा जा सकेगा।

'गीता-प्रवचन' (अजिल्द) का मूल्य एक रुपया और सजिल्द का मूल्य सवा रुपया रहेगा। पोस्टेज, पैकिंग, रेलभाड़ा आदि खरीदार के जिम्मे रहेगा। उत्तर प्रदेशवालों को सेल-टैक्स भी लगेगा।

—संचालक

---

www.vinoba.in

मध्यप्रदेश में सामूहिक पदयात्राओं के परिणाम

मध्यप्रदेश के कार्यकर्ताओं का एक शिविर अकोला में जुलाई १९५५ में हुआ था, जिसमें निश्चय किया गया था कि आगामी सर्वोदय-सम्मेलन तक म० प्र० के हर एक गाँव में भूदान-यज्ञ का संदेश पहुँचाया जाय। इस बीच एक लाख एकड़ जमीन, सौ नये समयदानी कार्यकर्त्ता, सौ ग्रामदान, दस हजार "साम्य-योग" के ग्राहक, पचीस हजार रुपयों की साहित्य-बिक्री और एक लाख रुपयों का संपत्तिदान प्राप्त करने की कोशिश करेंगे, ऐसा तय किया गया था।

अगस्त से नवम्बर '५५ तक के चार माह में मराठी विभाग के जिले में चार-पाँच ही पद-यात्रायें की गयीं। दिसंबर में होशंगाबाद में सम्मेलन हुआ। वहाँ उपर्युक्त लक्ष्य का पुनरुच्चार हुआ। तय हुआ कि सब कार्यकर्ता लगन से जुट जायँ। छत्तीसगढ़ विभाग में सबको मिलकर कार्य में सहायता देने की बात तय हुई।

कार्यकर्ताओं के दिल में मंत्र तो था, पर सामूहिक पद-यात्रा के तंत्र की जानकारी नहीं थी। कई तहसील में पद-यात्राओं के अधकचरे आयोजन होते रहे। आयोजन का तंत्र जानने में कुछ दिन बीते। सामूहिक पद्धति से यह काम करने की संगठनात्मक वृत्ति कार्यकर्ताओं में निर्माण होने में भी कुछ समय बीता। लेकिन सब हुआ और प्रेरक रूप में हुआ।

उपर्युक्त कठिनाइयों को ध्यान में लेकर देखा जाय तो गत दस महीनों में निम्नलिखित कुल कार्यों के आँकड़े कुछ कम नहीं हैं।

विषय	लक्ष्य	काम हुआ	कितने प्रतिशत यश मिला
गाँवों में संदेश पहुँचाना	१०८ तहसीलों में	७८ तहसीलों में	७२
भूमि प्राप्ति	१ लाख एकड़	७५००० एकड़	७५
संपत्तिदान	१ लाख रुपये	५०,००० रुपये	५०
कार्यकर्ता	१००	१२५ मिले	१२५
साहित्य	२५,००० रुपये का	२५,००० रुपये का	१००
साम्ययोग के ग्राहक	१०,०००	३,७००	३७

संपत्तिदान का अकोला-सम्मेलन का लक्ष्य १६,००० रुपये का था। वह तो कभी का पूर्ण हुआ। लेकिन स्व० श्रीकृष्णदासजी जाजू ने इस लक्ष्य को कम बताकर एक लाख का नया लक्ष्य निर्धारित किया।

खुशी इस बात की है कि भू-वितरण का काम इस वर्ष न करने का तय होने पर भी प्राप्ति के साथ-साथ पन्द्रह हजार एकड़ भूमि वितरित हो सकी। बिहार में वितरण के साथ प्राप्ति हो रही है और मध्य प्रदेश में प्राप्ति के साथ वितरण हो रहा है। इन दो प्रदेशों की ये दो विशेषतायें हैं।

स्व० जाजू जी की स्मृति में २३ अक्तूबर '५६ तक निश्चित संपत्तिदान प्राप्त करने का संकल्प किया गया, तो चाँदा, भंडारा और नागपुर जिलों में बहुत पहले ही संकल्प-पूर्ति हो गयी।

हमारे मध्य प्रदेश में इन पाँच सालों में इतनी अधिक भूमि इसके पहले कभी नहीं प्राप्त हुई थी। अधिक से अधिक गत साल ३४ हजार एकड़ जमीन मिली। इस साल तो भूमि-प्राप्ति का आँकड़ा ७५ हजार तक बढ़ा है।

मराठी विभाग का यश तो अधिक अभिनंदनीय है। वहाँ की ३८ तहसीलों में से ३२ तहसीलों में संदेश पहुँचाया गया। ६० नये कार्यकर्ता प्राप्त करने का संकल्प था, तो १०० कार्यकर्ता मिले।

नागपुर-विभाग में चार जिले हैं। इन चार जिलों के कार्यकर्ताओं ने अकेले-अकेले अपनी तहसील में प्रचार करने के बजाय एक-एक तहसील चुनकर सब मिलकर अलग-अलग टोलियाँ बनाकर प्रचार करने का तय किया। उसके मुताबिक आठ माह में १० तहसीलों में कार्यक्रम हुआ और कुल २३५ टोलियों ने २६२११ गाँवों में संदेश पहुँचाया, ४१४८ दाताओं से १०,००३ एकड़ भूदान मिला, १९२८ संपत्तिदान-पत्र प्राप्त हुए, ५१०९) की बिक्री हुई और भूदान-पत्र के ४९८ ग्राहक बने।

सामूहिक पदयात्रा के नतीजे इससे कहीं ज्यादा आकर्षक आ सकते हैं। उसके लिए अच्छी तैयारी पहले से लंबे समय तक करनी चाहिए। हरएक गाँव में कांजीवरम-सम्मेलन तक संदेश पहुँचाने का निश्चय किया गया था। इसलिए तैयारी पूरी न होते हुए भी जैसा कार्यक्रम बनाया गया, उसी मुताबिक अखंड काम चला।

इस पदयात्रा में **एक ग्रामदान भी मिला**। कई गाँव के सभी लोगों ने दान दिया। कई गाँवों में भूमिहीन कोई न रहे, इतनी जमीन मिली। संपत्तिदान के भरोसे निधिमुक्त होने की स्थिति भी कुछ तहसीलों में आयी।

जमीन मिली, साहित्य बिका, आदि तो गौण काम माना जायेगा। पर मुख्यतः इससे गाँव-गाँव में संदेश पहुँचा। तहसीलों में विचार-मंथन शुरू हुआ और उस मंथन में से नये कार्यकर्ता ऊपर आये। यह सबसे बड़ा लाभ हुआ। जिस तहसील में भूदान का नाम कोई नहीं जानता था, वहाँ भूदान के विचार का लोगों ने स्वागत किया और नये कार्यकर्ता ऐसे सामने आये, जो आगे जाकर अपनी तहसील का काम सँभालने लगेंगे। इसमें बूढ़े, जवान, रचनात्मक कार्यकर्ता, राजनैतिक क्षेत्र के कार्यकर्ता और सरकारी नौकरी ठुकरानेवाले, इस तरह सब तरह के कार्यकर्ता आये हैं।

कार्यकर्ता अकेले घूमते तो इतनी जमीन नहीं मिलती, इतने गाँवों में प्रचार नहीं होता और जनता में जो जरूरत पैदा हुई और नये कार्यकर्ताओं को इस काम में आने की प्रेरणा हुई, वह नहीं होती। सामूहिक पदयात्रा हमारे लिए वरदान-स्वरूप सिद्ध हो रही है।

ठाकुरदास बंग
बसंत बोंबटेकर

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

राजस्थान

नागोर जिले की परबतसर तहसील के ९ गाँवों में भूमिवितरण-समारोह संपन्न हुआ। १२ भूमिहीन परिवारों में २२५ बीघा भूमि का वितरण किया गया। ९१ बीघा भूमि और १४ संपत्तिदान-पत्र भी मिले।

जसवंतपुर गाँव में भूदान-विचार समझाने के बाद तमाम ग्रामीण जनता ने तुरंत उसी समय गाँव के कुल भूमिहीन परिवारों की भूमि-समस्या हल करने का आश्वासन श्री बद्रीप्रसाद स्वामी को दिया।

—मोहनलाल शर्मा, मकराना

राजस्थान भूदान-यज्ञ-बोर्ड की ओर से चुरू जिले के प्रतिनिधि श्री बनवारीलाल वेदी ने सुजानगढ़ तहसील के परावा, भार्षीणा, सडूं छोटी अमरसर, तैनदेसर, ईथारा और बम्बू के ३९ परिवारों में ९२ बीघा भू-दान में प्राप्त भूमि का वितरण तारीख २२ अप्रैल से १ मई तक किया।

भू-वितरण-यात्रा में श्री श्याम सुन्दरजी शर्मा और जिला भू-दान के कार्यकर्ता श्री रूपरामजी मीने भी यात्रा में साथ थे। भूमि-वितरण-कार्य में तहसील के कर्मचारियों का अच्छा सहयोग रहा।

बंगाल

पिछले अप्रैल माह में पश्चिम बंगाल में ३२९ दानपत्रों से करीब २८३ एकड़ भूमि प्राप्त हुई और ३३ एकड़ वितरित हुई। कुल ९९ गाँवों में प्राप्ति और ९ गाँवों में वितरण संपन्न हुआ। करीब ६०६, रुपये के ३१ संपत्ति-दान-पत्र प्राप्त हुए। इसके अलावा १५४ दाताओं से अनाज के दान-पत्र भी प्राप्त हुये। कुल ४५४ गाँवों से संपर्क हुआ। सूतांजलि दस हजार गुंडियाँ मिलीं।

कांजीवरम् भूदान-पदयात्रा

सर्वोदय-संमेलन कांजीवरम् के लिए गत ४ अप्रैल को शुरू हुई पदयात्रा ने अप्रैल के तीसरे सप्ताह में लगभग ३०० मील की दूरी तय की। इस अवधि में कुल ४९ एकड़ का भूदान तथा करीब १,०००, रुपये के संपत्ति-दान-पत्र प्राप्त हुये।

बंबई

बंबई में ता० २० अप्रैल से ३० अप्रैल तक भूदान-पत्रिकाओं के ११३ ग्राहक बने। ३६ एकड़ भूमि मिली, १,५१५८ रुपये के १४ संपत्तिदान-पत्र मिले। साधनदान में ७२८ रुपये प्राप्त हुए। १,२६८ पुस्तकें बिकीं। विद्यार्थी-कार्यकर्ताओं के ६ शिविर लिये। —ग० देसाई, मंत्री,

बिहार

श्री बैद्यनाथ प्रसाद चौधरीजी की पैदल यात्रा पूर्णिया जिले के नरपतगंज थाने में चल रही है। ६ मई तक ४९ आदाताओं में ५२ एकड़ भूमि का वितरण हुआ। २६० रुपये के संपत्तिदान-पत्र मिले। साहित्य-प्रचार हुआ। —बिंदु

www.vinoba.in

उत्तर प्रदेश

भूतपूर्व जिला-जज श्री कामतानाथ गुप्त भूदान-यज्ञ में पूर्णतः लग गये हैं। आपने ३२ दिन की पदयात्रा की। उनके त्यागमय जीवन से प्रभावित होकर अबतक उन्हें ४२५ बीघा भूमि, ३,२९६ रुपये के संपत्तिदान-पत्र, २४ मन, ३७ सेर का वार्षिक अन्नदान, साधनदान और मुआवजा-दान प्राप्त हुआ।

उ. प्र. भूदान-समिति, सेवापुरी —श्यामाचरण शास्त्री, का. मंत्री

बाबा राघवदासजी की यात्रा

गत ३० अप्रैल को पूज्य बाबा राघवदासजी ने अपनी १२ दिनों की नैनीताल जिले की पदयात्रा समाप्त कर ली और आजकल वे बिजनौर जिले में यात्रा कर रहे हैं। नैनीताल बाबाजी का २९वाँ जिला था। इस जिले में १३५ दानदाताओं द्वारा २४४ एकड़ भूमि, ७५६ रुपये साधनदान में और ३०० रुपये के वार्षिक सम्पत्ति-दान-पत्र प्राप्त हुए ६११ रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका।

उनकी यह यात्रा नैनीताल के तराई के इलाके में हुई, जहाँ पिछड़ी कही जाने वाली थारू बुक्सा जातियों के गाँवों में भी कई दिन कार्यक्रम रहा। उनकी सिधाई और सत्य के प्रति निष्ठा एवं अपने सारे मामले स्वयं अपनी पंचायत में निपटा लेने के तरीके को देख कर बाबाजी बहुत प्रभावित हुए। ये लोग बहुत परिश्रमी होते हैं और उनके गाँवों में बिना जमीन का कोई व्यक्ति नहीं मिलता। यह देख कर बाबाजी को अनुभव हुआ कि अगर इस प्रदेश में थोड़ा-सा ध्यान दिया जा सके, तो यह जिला उत्तर प्रदेश का 'कोरापुट' सहज ही बन सकता है।

—रामचन्द्र मेहरोत्रा

मध्यभारत

उज्जैन जिले के खडोतिया ग्राम में जिला समिति के संयोजक ने गांधी परिश्रमालय-आश्रम स्थापित करने का ता० ३० अप्रैल को निश्चय किया। आश्रम के लिए श्री चौधरी कन्हैयालालजी ने जमीन तथा मकान आदि देने का संकल्प किया। आश्रम में छः परिवारों की रहने की व्यवस्था कर आसपास के ग्रामों में भूदान, ग्रामोद्योग का प्रचार करते हुए ग्राम को स्वावलंबी बनाने का प्रयत्न किया जायेगा।

—आचार्य दीपचंद्र जैन

तमिलनाड़

ता० १२ मई को विनोबाजी ने तमिलनाड प्रदेश में किया, जहाँ उन्हें ५० हजार एकड़ जमीन के दानपत्र अर्पित किये गये। ६० लाख परिवारों से उन्होंने दान देने की अपील की, जो राज्य की कुल भूमि के $\frac{1}{6}$ के हिसाब से करीब २२ लाख एकड़ होती है।

मुख्य मंत्री श्री कामराज नादर, प्रां० कांग्रेस अध्यक्ष श्री कक्कन और सैकड़ों कार्यकर्ताओं सहित जनता ने विनोबाजी का पूर्ण कुंभ से स्वागत किया। श्री नादर ने "जनता की गरीबी दूर करने के इस मिशन" को पूर्ण सहकार देने का आश्वासन दिया।

आंध्र का ताज़ा विवरण

५,५२९ भूमिदाता ६२,६३४ एकड़ भूमि और १,१४,९०३ रुपये के संपत्तिदान-पत्र।

पू० विनोबाजी का चिंगलपुट जिले का पदयात्रा-कार्यक्रम

ता. मई	स्थान	मील	पो. टेलीग्राफ	रेलवे-स्टेशन	बस का मार्ग
१८	माउंट रोड (मद्रास)	६	मद्रास	मद्रास	मद्रास
१९	थियागरया नगर	६	,,	,,	,,
२०	मौल्लीवक्कम	९	मौल्लीवक्कम	एस.टी.श्राम्स माउंट	,,
२१	पाझंजूर	७	पालनजूर	—	
२२	श्रीपेरुंपडुर	७॥	श्रीपेरुंपडुर	तिरुवेल्लोर	,,
२३	मोझाचूर	६॥	मोझाचूर	—	—
२५	थेन्नेरी	६	थेनेरी	वास्जापेर	मद्रास
२६	(सर्वोदयपुरम्) कांजीपुरम्	६	कांचीपुरम्	कांजीवरम्	,,

—सर्वोदय-सम्मेलन, कांजीवरम् के अवसर पर होनेवाले चर्चा-मंडलों की बैठकें ता० २५ मई से शुरू होंगी। पूर्व सूचित विषयों के अलावा एक और विषय "रचनात्मक संस्थाओं द्वारा भूदान-कार्य में सहयोग" चर्चा के लिए रखा गया है। इन चर्चा-मंडलों में भाग लेने की इच्छा रखनेवाले भाई-बहन ता० २५ मई तक कांजीवरम् पहुँच जायँ।

—सहमंत्री,

विद्यार्थी-सर्वोदय-शिविर

गांधी-स्मारक-निधि छात्रों व प्राध्यापकों के लिए कुछ बौद्धिक शिविरों का संगठन कर रही है। इस बार प्रदेशीय स्तर पर एक ही शिविर करने के बजाय हमने सप्तदिवसीय बड़े-बड़े तीन क्षेत्रीय शिविर करने का निश्चय किया है।

(१) फिरोज़ाबाद (जिला आगरा) १० जून से १६ जून तक, (२) सीतापुर (खास) १७ जून से २३ जून तक और (३) मुरादाबाद खास २४ जून से ३० जून तक।

शिविर में विशेष प्रशिक्षण-विषय होंगे: (१) सर्वोदय क्या है? (२) सत्य और अहिंसा द्वारा राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति, (३) विकेन्द्रित शासन-व्यवस्था और विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था, उसका उपाय तथा लाभ, (४) शरीरश्रम का सामाजिक महत्त्व, उसका उपाय तथा लाभ, (५) गांधीजी की शिक्षा-नीति, (६) व्यक्तिगत सम्पत्तिवाद, भूदान तथा सम्पत्तिदान और (७) गांधीजी की ईश्वरभक्ति तथा नैतिकता आदि।

इन शिविरों में गांधी-दर्शन के प्रमुख विद्वानों तथा नेताओं के व्याख्यान होंगे। ग्राम-सर्वेक्षण, भूदान, श्रमदान तथा अन्य रचनात्मक सेवा-कार्यों का व्यावहारिक ज्ञान कराने का भी प्रयत्न किया जायगा। शिविर का दैनिक कार्यक्रम प्रातः साढ़े चार बजे से रात के दस बजे तक चलेगा। विशेष जानकारी दफ्तर से प्राप्त करें।

४ कैंटोन्मेंट रोड, लखनऊ —दरबारीलाल अस्थाना, गांधी-स्मारक-निधि

श्रमभारती, खादीग्राम में शिक्षा-व्यवस्था

गर्मी की छुट्टी के बाद हमारा नया सत्र १ जून से शुरू होता है। १ जनवरी १९५६ से यहाँ की शिक्षा-पद्धति में जो बुनियादी परिवर्तन हुए हैं, उनके अनुसार अब हमारी श्रमशाला (बुनियादी) में स्थानीय बच्चे ही लिए जा रहे हैं, बाहर के नहीं। इसलिए कोई भाई-बहन अपने बच्चों के लिए श्रमशाला के आवेदन-पत्र न भेजें।

बाहर के बच्चों के लिए उद्योगशाला (पोस्टबेसिक) है। इसके लिए विद्यार्थी की शैक्षणिक योग्यता मैट्रिकुलेशन तक की या बुनियादी तालीम के अनुसार बुनियादी पास की होनी चाहिए। शक्षणिक योग्यता के साथ-साथ शारीरिक क्षमता भी ऐसी होनी चाहिये कि पूरे चार घंटे का कठिन श्रम किया जा सके।

भोजन और निजी खर्च के लिए तीस रुपया काफी होता है। उद्योगशाला के दूसरे वर्ष से विद्यार्थी में दस से बारह रुपये माहवार कमाने की क्षमता हो जानी चाहिये, ताकि माता-पिता का भार क्रमशः घटता जाय।

उद्योगशाला में कुल चार साल का अभ्यासक्रम है। प्रारम्भिक खेती, भवन-निर्माण, वस्त्र-विद्या, सफाई, आहार और आरोग्य तथा समाज-ज्ञान, ये छह उद्योगशाला के अनिवार्य विषय हैं। खेती, भवन-निर्माण, और वस्त्र-विद्या में से किसी एक में एडवान्सड् कोर्स भी है। इन मूल प्रवृत्तियों में निहित जितना ज्ञान है—जैसे समाज-शास्त्र, विज्ञान, गणित, भाषा और साहित्य आदि—वह सब दिया जाता है।

आवेदन पत्र देते समय इन बातों की जानकारी आवश्यक है: (१) नाम और पता, (२) आयु, स्वास्थ्य और श्रम-क्षमता, (३) शैक्षणिक योग्यता। आवेदन-पत्र, आचार्य, श्रम-भारती, खादीग्राम (पो०) बाया जमुई, मुंगेर, बिहार, के पास २० मई तक पहुँच जाना चाहिये।

श्रम भारती, खादीग्राम (मुंगेर) —आचार्य, राममूर्ति

विषय-सूची

१.	सामूहिक चिंतन की आवश्यकता	विनोबा	१
२.	राजनीति बनाम समाज-परिवर्तन	जयप्रकाश नारायण	२
३.	भूमि तो गोपाल की सब (गीत)	'दिनेश'	२
४.	विनोबाजी के साथ प्रश्नोत्तर	—	३
५.	आंदोलन का सिंहावलोकन	सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री	४
६.	सर्वोदय-समाज : विदेशों में	—	५
७.	हम किसे खोज रहे हैं?	विनोबा	६
८.	सर्वोदय की दृष्टि से : (१) इनसान की शान : हुकूमत नहीं, आजादी; (२) भारत हमारा देश है	-दादा धर्माधिकारी	६
९.	उत्सव, अनुष्ठान और सर्वोदय	राममूर्ति	९
१०.	सामूहिक पदयात्राओं की पूर्व-तैयारी	ब्रजेशचन्द्र वर्मा	१०
११.	मध्यप्रदेश में सामूहिक पदयात्राओं के परिणाम	ठा० बंग, वसंत बोंबटकर	११
१२.	भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण	—	११

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, बनारस में मुद्रित और प्रकाशित। पता: भूदान-यज्ञ साप्ताहिक, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in